प्रकाशक—
श्री जवाहर विद्यापीठ
भीनासर (बीकानेर)

प्रथम संस्करण सन्—१९४८
द्वितीय " सन्—१९६५
तृतीय " सन्—१९७८
चतुर्थ " सन्—१९८५
पंचम " सन्—१९९२ (११०० प्रतिया)
छठा " सन्—१९९३ (११०० प्रतिया)
सातवा " सन्—२००० (११०० प्रतियां)

मूल्य—13/– रुपये

मुद्रक—
जैन आर्ट प्रेस
समता–भवन
बीकानेर—334005 (राज.)
फोन—544867/203150

प्रकाशकीय

महान युगद्रष्टा, वैचारिक क्रांति के सूत्रधार युग प्रवर्तक ज्योतिधर जैनाचार्य पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. के लोकोपकारी व्याख्यानो को 'जवाहर किरणावली' के रूप मे प्रकाशित कराने का प्रमुख श्रेय भीनासर के कर्मनिष्ठ, आदर्श समाजसेवी श्रावक रत्न स्वर्गीय सेठ श्रीमान् चम्पालाल जी बांठिया को है। विराट व्यक्तित्व की वाणी को कालजयी बनाने मे आपने अनुपम दूरदर्शिता एव अभूतपूर्व सूझबूझ का परिचय दिया है। इस चिन्तनशील प्रवचन साहित्य से अध्यात्म का अमृत पान कर अवगाहन का शुभ अवसर ही नही मिलता, जीवन के अन्तर्मुखी विकास मे भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

ज्ञातव्य है कि विक्रम सवत् २००० मे श्रीमद् जवाहराचार्य का भीनासर मे स्वर्गवास हो जाने के पश्चात् उनकी स्मृति को अक्षुण्ण बनाने हेतु स्वर्गीय सेठ श्रीमान् चम्पालाल जी बाठिया के अथक प्रयासो एव समाज के उदार सहयोग से श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर की स्थापना की गई। सस्था की स्थापना का प्रमुख उद्देश्य जवाहर साहित्य को लागत मूल्य पर प्रकाशित कर इसका अधिकाधिक प्रचार-प्रसार करना रहा है और अब तक संस्था ने पण्डित शोभाचन्द्रजी भारिल्ल के सम्पादकत्व मे जवाहर किरणावली की ३२ किरणो का प्रकाशन कर एक उल्लेखनीय कार्य किया है।

प्रस्तुत पुस्तक क्या है, मानव-जीवन को इससे क्या प्रेरणा मिलेगी, भौतिकता से पीडित विश्व को मानवता का भव्य सन्देश देने मे यह कहा तक सफल हुई है, इसके प्रकाशन का उद्देश्य क्या है आदि प्रश्नो की समस्या हमारे समक्ष खड़ी है । इन समस्त प्रश्नो के समाधान के लिए पाठको से अनुरोध करते हैं कि वे स्वयं पुस्तक का अवलोकन करें, पढे और मनन करें। तभी इन प्रश्नो का सुन्दर समन्वयात्मक समाधान प्राप्त कर सकेगे ।

हम तो यहा इतना ही सकेत कर सकते है कि आत्म-विकास की पूर्णता और लोक-जीवन को सफलता के लिये जिन विचारो की आवश्यकता है, वे पुस्तक के पन्ने-पन्ने मे विखरे पडे है और उनकी प्राप्ति व्यक्ति की अपनी योग्यता एवं पात्रता पर आधारित है । रत्नाकर के तट पर बैठ कर रत्न-रत्न रटने से रत्न नही मिला करते, उनकी प्राप्ति के लिये तो गहरे गोते की जरूरत होती है । सत कबीर के शब्दो मे :—

जिन ढूंढा तिन पाइयां, गहरे पानी पैठ,
मैं बपुरा डूबन डरा रहा, किनारे बैठ ।

विश्व के कथा-साहित्य मे जैन-कथा साहित्य, जो वास्तव मे साहित्यिक क्षेत्र मे अभी तक पूर्णरूपेण प्रकाश मे नही आया है, अनुपम है । जैन कथानको की यह अपनी मौलिक विशेषता है कि उनमे यथार्थ और आदर्श का इस सुन्दरता से चित्रण किया गया है कि वे पाठको के हृदय-पटल की गहराइयों में प्रविष्ठ होकर उत्थान की ओर अग्रसर

करते है । कथा-वस्तु कहीं भी असगत व अस्वाभाविक नही होती है । स्वाभाविक रूप से मर्यादा का निर्वाह किया जाता है और सत्य एवं सर्व-कल्याण का बोध देती है ।

जैन कथा साहित्य में जन-जीवन की प्रेरणा देने वाले अनेक उत्तम चरित्रो मे सती शिरोमणि अजना एक गणनीय चरित्र है । सती अंजना का चरित्र महिलाओ एवं पुरुषो के लिये महान् उद्बोधक और जीवन को समुन्नत बनाने के लिये पथ-निर्देशक जाज्वल्यमान प्रकाशस्तम्भ है ।

भारतीय दाम्पत्य जीवन का अपना माधुर्य है । इसमे पति और पत्नी मे समर्पण की भावना है । एक दूसरे मे अपने अस्तित्व को विलीन कर देने की साध है । दोनो मिलकर दम्पति बनते हैं और इसी मे दाम्पत्य जीवन की सार्थकता है । दोनों मे दान है किन्तु आदान की अभिलाषा नही है । अधिकारो की लालसा नही, कर्त्तव्य कर गुजरने की तमन्ना है ।

लेकिन आज युगीन सभ्यता से प्रभावित भारतीय दाम्पत्य जीवन दिग्भ्रात हो चुका है । दाम्पत्य जीवन की पवित्रता, आत्मीयता स्वात्मसमर्पण की सद्भावना समाप्त हो रही है । मधुरता की अमृतधारा सूखती जा रही है । सस्कृति की आत्मा रोगाक्रात है । अत. यह नही भूलना है कि यदि हमे अपनी सस्कृति सुरक्षित रखनी है तो हमारा दाम्पत्य-जीवन उसी साचे मे ढाला जाना चाहिये, जिसकी आज्ञा भारतीय-संस्कृति देती है ।

यद्यपि राजनैतिक दृष्टि से हम स्वतन्त्र हैं, हमारा

देश स्वतन्त्र है, लेकिन जब तक सांस्कृतिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति नही होगी, तब तक अन्यान्य स्वतन्त्रताओं का सदुपयोग नहीं कर सकेंगे। सांस्कृतिक स्वतन्त्रता की सुरक्षा का सरलतम साधन दाम्पत्य-जीवन की पवित्रता है। इस पवित्रता को प्राप्त करने में भारतीय आदर्श चरित्र उपयोगी हो सकते हैं। इसी विचार से सती अंजना का चरित्र पाठको के सामने उपस्थित किया जा रहा है।

प्रस्तुत पुस्तक ज्योर्तिधर्म श्री जवाहराचार्य के प्रवचनो का सुन्दर सरल संकलन है। उसकी वाणी के सहज प्रवाह में स्वाभाविक गहनता, जन्मजात प्रखरता प्रस्फुटित हो उठी है।

धर्मनिष्ठ सुश्राविका बहिन श्रीमती राजकुंवर बाई मालू बीकानेर ने श्री जवाहर विद्यापीठ को जवाहर साहित्य प्रकाशन के लिए एक धनराशि प्रदान की थी। बहिन श्री की भावना के अनुसार संस्था द्वारा उक्त साहित्य प्रकाशन का कार्य चल रहा है तथा इस पुस्तक अंजना के चतुर्थ सस्करण तक का प्रकाशन इसी विधि में से किया गया। सत्साहित्य के प्रचार-प्रसार के लिए बहिन श्री की अनन्य निष्ठा चिरस्मरणीय रहेगी।

कुछ समय से इस पुस्तक का स्टॉक संस्था के पास खत्म होने तथा पाठको की निरन्तर माग होने पर इस पुस्तक के पत्रम सस्करण का प्रकाशन श्रीमान् बालचन्दजी, ज्ञानमल जी, झूमरमल जी, टीकमचन्द व गोरधनदास जी सेठिया, भीनासर द्वारा अपने पूज्य पिता श्री स्व. श्रीमान्

हजारीमल जी सेठिया की पुण्य स्मृति मे हजारीमल सेठिया चैरिटेबल ट्रस्ट (करीमगज) भीनासर द्वारा श्री जवाहर विद्यापीठ भीनासर को दी गई राशि द्वारा किया गया था।

प्रस्तुत सातवां सस्करण का प्रकाशन भी पंचम व छठे सस्करण के अर्थ प्रदाता ट्रस्ट की राशि द्वारा ही किया जा रहा है।

निवेदक

अध्यक्ष	मन्त्री
भंवरलाल कोठारी	मेघराज बोथरा

श्री जवाहर विद्यापीठ–भीनासर (बीकानेर)



अनुक्रमणिका

अंजना

१ : जन्म

प्राचीन काल मे इसी भव्य भारतवर्ष मे महेन्द्रपुर नामक एक सुन्दर नगर था। जिस समय की यह कथा है, उस समय महेन्द्रपुर का राजा महेन्द्र था। राजा महेन्द्र की पत्नी का नाम रानी मनोवेगा था। राजा महेन्द्र के यहा कई पुत्रो का जन्म होने के पश्चात् एक कन्या का जन्म हुआ। आज कल की भाति उस समय कन्या का जन्म विपत्ति का अवतार नही समझा जाता था। अतएव कन्यारत्न का जन्म होने पर माता-पिता ने बडे चाव से जन्मोत्सव मनाया और कन्या का नाम रखा—अजना।

अजना विकार-युक्त दृष्टि वालो को भी सुधारने वाली थी। विकृत दृष्टि वालो की आखो मे सदाचार रूपी अजन आजने वाली यह अजना थी। वह परमात्मा के स्वरूप को पहचानने वाली थी और साथ ही साथ सुन्दरी भी थी।

ससार मे सोने मे सुगन्ध नही देखा जाता। इसी प्रकार ससार मे गुण और सौन्दर्य का एक ही स्थान पर मिलना भी कठिन माना जाता है। जहा रूप है-सौन्दर्य है वहा प्राय गुणो की न्यूनता दिखाई देती है जहां गुण हैं, वह सौन्दर्य प्राय नही होता। परन्तु अजना मे सौन्दर्य के साथ सद्गुणो का भी सुन्दर समन्वय हुआ था। इस प्रकार उसने सोने मे सुगन्ध की कहावत चरितार्थ की थी।

राजा महेन्द्र अजना को देखते तो उनकी प्रसन्नता का पार न रहता। वह मन ही मन सोचते–यह कन्या अवश्य ही हमारे कुल की प्रतिष्ठा बढायेगी। अजना को सुयोग्य बनाने के लिए राजा महेन्द्र ने उसकी शिक्षा आदि की उचित व्यवस्था की।

क्या आजकल के माता–पिता अपनी कन्या को कन्योचित शिक्षा देने की ओर ध्यान देते हैं? आज के लोग कन्या को लाड भले ही लडा ले परन्तु कन्योचित शिक्षा देने की ओर बहुत ही कम ध्यान देते है।

अजना पढ़-लिखकर होशियार बनी। कुमारी अवस्था मे अंजना ने विद्या का अभ्यास किया। अब वह विवाह के योग्य हो गई।

२ : विवाह की चिन्ता

कन्या जब विवाह के योग्य हो जाती है तो उसके विवाह की चिन्ता माता–पिता को स्वभावत होती ही है। अजना को विवाह के योग्य जानकर राजा महेन्द्र विचार करने लगे—"यद्यपि अजना को सुयोग्य ही वर मिलेगा, परन्तु इस विषय मे मैं अपनी प्रजा की सम्मति ले लूं तो क्या हर्ज है? इससे प्रजा को यह भी विदित हो जायगा कि किस उम्र मे विवाह करना योग्य है और कैसे वर के साथ सम्बन्ध करना चाहिये? मै बालविवाह का विरोधी हू। अतएव प्रजाजनो के सामने अपनी ही कन्या का आदर्श उदाहरण उपस्थित करके मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि मैं बालविवाह का विरोध करता हूं। कन्या को प्रजाजनो

के सामने बुलाकर मुझे यह भी स्पष्ट कर देना चाहिए कि अब कन्या वास्तव मे ही विवाह के योग्य हो गई है किस प्रकार के वर के साथ कन्या का विवाह करना चाहिए, इस सम्बन्ध मे भी प्रजाजनो की राय लेना उचित होगा।"

राजा महेन्द्र ने इस प्रकार विचार करके रानी से कहा—अंजना को तैयार करके कल राज सभा मे भेज देना।"

राजा महेन्द्र का कार्य उचित था या अनुचित ? क्या उसे अपनी कन्या का विवाह करने के विपय मे प्रजा की सम्मति लेना आवश्यक था ? इस प्रश्न के उत्तर मे अनेक बाते कही जा सकती है। कहा जा सकता है कि राजा होने पर भी किसी मनुष्य की व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तो कायम रहनी ही चाहिए। यह कहना सही भी है। परन्तु, जो राजा अपने व्यक्तित्व को अपनी प्रजा मे स्वेच्छापूर्वक बिखेर देता है, उसके पास व्यक्तिगत स्वतन्त्रता नाम की कोई चीज रह ही नही जाती। वह प्रजा के साथ तादात्म्य का अनुभव करता है अर्थात् प्रजा के रूप मे ही अपने को पाता है। ऐसी स्थिति मे राजा और प्रजा का द्वैत ही समाप्त हो जाता है। वास्तव मे जो राजा अपनी कन्या के विवाह के विषय मे भी प्रजा की सम्मति मागता है, वह दूसरे काम विना उसकी सम्मति के कैसा करेगा ?

राजा-प्रजा का यह अनोखा और मधुर सम्बन्ध प्राचीन काल मे भारतवर्ष मे पाया जाता था। उस समय राजा और प्रजा के बीच किसी प्रकार के सघर्ष के लिए अवकाश नही था। न राजा अपने अधिकारो के लिए प्रजा का दमन करता था और न प्रजा अपनी स्वाधीनता के लिए

युद्ध छेड़ती थी। राजा प्रजा की शक्ति का केन्द्र था। प्रजा के समस्त अधिकार राजा मे केन्द्रित थे और राजा, प्रजा की भलाई के लिये ही उनका उपभोग करता था। मगर देश के दुर्भाग्य से आज क्या स्थिति है? आज सर्वत्र राजा-प्रजा मे सघर्ष चल रहा है। राजा समझता है कि प्रजा का शोषण करने के लिये ही विधाता ने हमारा निर्माण किया है। ऐसी स्थिति मे किसी कार्य के लिये प्रजा की सम्मति लेने की उन्हे आवश्यकता ही महसूस नही होती। उन्हे यह भी नही सूझता कि हम तो प्रजा का शोषण कर रहे है परन्तु जब शोषण करने के लिये कुछ शेष ही नहीं रहेगा, तब क्या होगा?

इस प्रकार अजना के चरित्र से जहा राजा और प्रजा के सम्बन्ध पर सुन्दर प्रकाश पड़ता है, वहा अहंकार को जीतने की भी शिक्षा मिलती है।

आज लोग किसी अच्छे काम के सम्बन्ध मे भी दूसरों की सलाह लेने मे अपना अपमान समझते हैं परन्तु पुराने जमाने के लोग दूसरो की सलाह-सूचना लेकर कार्य आरम्भ करने मे अपना हित समझते थे।

राजा महेन्द्र अपनी कन्या अंजना का विवाह करने के सम्बन्ध मे अगर दूसरो की सम्मति न लेते तो उनका कोई काम रुक नही सकता था। परन्तु राजा ने विचार किया कि मैं जिस मार्ग पर चलूंगा प्रजा भी उसी मार्ग पर चलेगी। अतएव राजा की हैसियत से प्रजा के सामने ऊचा आदर्श उपस्थित करना मेरा कर्त्तव्य है। सर्वप्रथम मैं वही आदर्श क्यो न उपस्थित करू कि कन्या का विवाह

कब करना चाहिए ? और प्रजा की दृष्टि मे कन्या विवाह के योग्य हुई है या नही, यह बात भी प्रजा से जान लेनी चाहिये ।

आज भी बाल–विवाह की प्रथा बहुत से प्रान्तो में प्रचलित है । गुजरात जैसे कुछ प्रान्तो मे यद्यपि यह प्रथा कुछ कम हो गई है, फिर भी मारवाड आदि प्रान्तो मे अब भी इसका बहुत जोर है । शायद माता-पिता यह सोचते हैं कि पुत्र-पुत्री हमारे ही हैं और उस कारण हम जब चाहें तभी उनका विवाह कर देने का हमे अधिकार है । इस सम्बन्ध मे किसी को कुछ कहने का हक ही क्या है और हमे क्या आवश्यकता है कि हम दूसरो की सम्मति मागते फिरें ?

इस प्रकार अपनी सन्तान की उन्नति के विषय मे विचार विनिमय करने की भावना बदल गई है और अभिमान ने उसका स्थान ग्रहण कर लिया है । माता-पिता धनाध सत्तांध और प्रेमाध होकर अपनी सतति का बाल-विवाह करके अभिमान करते हैं । मगर इस बालविवाह के कारण सन्तान का भावी जीवन कितना दु खमय बन जाता है, यह कहना कठिन है ।

राजा महेन्द्र की आज्ञा के अनुसार अजना राजसभा मे गई । राजसभा मे राजा, मन्त्रीगण और प्रजाजन उपस्थित थे । राजा महेन्द्र के अपनी कन्या को राजसभा मे बुलाने के कार्य को आप कदाचित् बुरा समझेंगे, मगर वास्तव मे राजा का यह कार्य उचित ही था, अनुचित नही । कन्या भले ही अपनी हो । पर उसके विवाह के विषय मे

दूसरो की सलाह लेने मे कोई बुराई नहीं है। राजा का कार्य अगर अनुचित होता तो क्या उस राज सभा मे कोई चतुर आदमी मौजूद न था जो स्पष्ट कह देता—'महाराज, आपकी कन्या के विवाह के विषय मे हमारी सलाह लेने की क्या आवश्यकता है? यह तो आपके घर का काम है। आप अपने घर मे ही विचार कर लीजिए।'' किन्तु दूसरो की सलाह लेने की पद्धति अच्छी थी। और इस कारण किसी ने भी इसका विरोध नही किया। दूसरी बात यह है कि आप स्वय इस पद्धति को बुरा नही कह सकते। जो लोग इस पद्धति को अच्छी समझते है, वे भी क्या इसे अपनाते हैं? अच्छाई को अपनी ही समझकर उसे अपनाने की भावना होनी चाहिए। इस भावना का परित्याग कर देना चाहिए कि जो मेरा है वही अच्छा है। अच्छाई कही भी क्यो न हो, उसे अपना लेने मे ही मनुष्य का कल्याण है। शास्त्र का कथन है कि आत्मा अपना कल्याण आप कर सकती है।

कहा जा सकता है कि हम किस प्रकार यह निर्णय करे कि अमुक बात अच्छी है या बुरी? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि जिस वस्तु को तुम अच्छी समझ रहे हो उस सत्य वस्तु को निष्कपट भाव से अपनाओ। इसी मे तुम्हारा कल्याण है। हा बात सत्य होने पर भी यदि उसके विषय मे, तुम्हारे हृदय मे कपट है तो वह सत्य बात भी तुम्हारे लिए असत्य ही है। कहने का तात्पर्य यह है कि जिस वस्तु के प्रति तुम्हारा हृदय सरल है, वह तुम्हारे लिए सत्य रूप ही है।

जिस बात मे सच्चाई होती है, उसके प्रकट करने मे किसी भी प्रकार का भय नही रहता। भय तो खोटी बात कहने या प्रकट करने मे ही होता है। अगर तुम्हारा सोना सच्चा है तो किसी के भी सामने उसे प्रकट करने मे तुम्हे सकोच नही होगा। तुम सभी जगह उसे दिखलाने को तैयार रहोगे। हा, सोना अगर नकली हुआ हो तो उसे दिखलाने मे तुम्हे भय तथा सकोच होगा।

राजा महेन्द्र ने विचार किया—"जब मेरी कन्या विवाह के योग्य हो गई है तो दूसरो को बतलाने मे हानि ही क्या है ? मुझे डर किस बात का है ? इसके अतिरिक्त मेरे लिए यह दुराग्रह रखना भी ठीक नही कि कन्या मेरी है तो उसके विवाह के विषय मे मैं स्वय अकेला ही विचार करू। मुझे तो सभाजनो की सम्मति लेना ही उचित जान पडता है।

इस प्रकार विचार करके राजा ने सभाजनो से प्रश्न किया—इस कन्या का विवाह किसके साथ करना उचित है ? राजा ने अपने मन मे दृढ निर्णय कर लिया था कि अगर सभाजनो की दृष्टि में यह कन्या किसी गरीब को देने योग्य जचे और कन्या भी यह बात स्वीकार करे तो ऐसा भी करने मे मुझे तनिक भी उज्र नही होगा।

राजा महेन्द्र का कथन सुनकर सभाजन प्रसन्न हुए। वह मन ही मन विचारने लगे—जब राजा अपनी कन्या के विषय मे हमारी सलाह लेते हैं तो हमे भी अपने कर्त्तव्य का विचार करना चाहिये। जब राजा भी हमारे वचन की कद्र करते है तो हमे भी राजा की सलाह लेनी और

माननी चाहिए ।

'यथा राजा तथा प्रजा'' यह एक तथ्य है । परन्तु इस कहावत के साथ दूसरी कहावत यह भी है कि "यथा प्रजा तथा राजा" अर्थात् जैसी प्रजा होती है वैसा ही राजा भी होता है । इससे राजा और प्रजा के सम्वन्ध की घनिष्ठता का पता चलता है ।

राजा महेन्द्र ने उपस्थित सभाजनो से कन्या के योग्य वर की पसन्दगी करने के विषय मे प्रश्न किया । सब में अधिक बुद्धिमान और अनुभवी है । अतः आप ही कन्या के योग्य वर वतलाइए ।"

प्रधान वोला—राजा रावण वड़ा राजा है और वलवान भी है । अगर राजा रावण के साथ इस कन्या का विवाह हो सके तो अपना वल भी कई गुना वढ जायगा । रावण अपना दामाद वनेगा तो उसका राज्यवल भी अपने राज्य-वल की वृद्धि करेगा । अतएव मेरी सम्मति के अनुसार कन्या का विवाह राजा रावण के साथ करना उचित होगा ।

प्रधान के इस कथन के उत्तर मे दूसरे सभासद ने कहा—"आप अपना या राज्य का ही भला सोचते हैं या कन्या का भी ? राजा रावण कितना घमडी और कितना उन्मत्त है, यह वात आप सभी जानते हैं वह अहंकार एव अभिमान के नशे मे चूर रहा है और दूसरो के टके सेर तक नही पूछता । ऐसे अभिमानी पुरुष मे सद्गुणो का वास कैसे हो सकता है ? ऐसे घमडी को कन्या देना तो विप की वेल वढाने के समान है । विप की वेल मे सदा

विष-फल ही लगते है । इसी भाति अभिमान रूपी वेल का फल भी कटुक ही होता है । राजा रावण अहकारी और अभिमानी होने के साथ उम्र मे भी वडा है । ऐसी स्थिति मे उसके साथ राजकुमारी का सम्बन्ध जोडना योग्य नही है । इसके अतिरिक्त रावण पहले ही विवाहित है और उसकी पत्नी मौजूद भी है । एक पत्नी की मौजूदगी मे अपनी कन्या देना अनुचित है ।

जिसके एक पत्नी मौजूद हो, उसे अपनी कन्या नही देनी चाहिए, यह कथन क्या आप युक्तिसगत समझते है ? आज तो लोगो को यह बात कटुक जान पडती है । मगर वह समय दूर नही जब आज जो बहुविवाह की प्रथा प्रचलित है यह समूल नष्ट हो जायगी । जो प्रथा कानून से मजबूर होकर छोडनी पडी, उसको स्वेच्छा से त्याग देना ही योग्य है ।

सभाजनो मे से दूसरे सदस्य ने पूर्वोक्त सदस्य का समर्थन करते हुए कहा—वास्तव मे राजा रावण के साथ राजकन्या का विवाह करना उचित नही है । हा, रावण की अपेक्षा उसके पुत्र मेघनाद के साथ सम्बन्ध करना ठीक होगा ।

तीसरे सदस्य बोले जब बाप ही योग्य नही है तो बेटा कैसे योग्य हो सकता है ? जैसा बाप वैसा बेटा, यह लोकोक्ति तो प्रसिद्ध ही है । जब बाप अहकारी है तो उसका बेटा भी अहकारी हो यह स्वाभाविक है । अतएव मेघनाद के साथ विवाह-सम्बन्ध करना भी मुझे ठीक नही जचता । विद्युत्प्रभ के साथ सम्बन्ध करना मेरी सम्मति मे ठीक होगा । विद्युत्प्रभ त्यागशील और सदाचारी है ।

चौथे सदस्य ने कहा विद्युत्प्रभ अल्पजीवी है। उसके विषय मे यह भविष्यवाणी है कि वह अठारह वर्ष की उम्र मे सयम धारण करेगा और २६ वर्ष की उम्र मे मुक्ति लाभ कर लेगा। ऐसी हालत मे उसके साथ भी विवाह-संबंध जोडना कैसे उचित कहा जा सकता ?

सभासद आपस मे इस प्रकार विचार-विनिमय कर रहे थे। राजा ने सभासदो से कहा –"इस प्रकार बातें करते रहने से प्रस्तुत प्रश्न का निर्णय कैसे होगा ?" तब सभासदो ने कहा—हम लोग परस्पर विचार–विनिमय करके आपको निश्चित उत्तर देगे।

राजकुमारी का विवाह-सम्बन्ध किसके साथ करना चाहिए, इस विषय को लेकर प्रजाजन आपस मे विचार-विनिमय करने लगे। एक ने कहा—"राजा प्रह्लाद के पुत्र पवनजी राजकुमारी के लिए सभी तरह से उपयुक्त वर है। वे अभी तक अविवाहित हैं। अतएव पवनजी के साथ ही राजकुमारी का सम्बन्ध जोडना उचित होगा। अन्य प्रजाजनो ने भी इस कथन का समर्थन किया। तब सर्वसम्मत निर्णय करके प्रजाजन राजा के पास पहुचे। राजा को भी उनका निर्णय पसन्द आया। प्रजाजनो ने राजा से कहा—लोगों ने तो यह निर्णय किया है मगर राजकुमारी की इच्छा का भी पता लगा लेना चाहिये। यह जान लेना आवश्यक है कि उन्हे यह सम्बन्ध पसन्द है या नही ?"

इस प्रकार विचार करके राजा ने अंजना से पूछा–हम लोगो ने पवन के साथ तुम्हारा विवाह करना निश्चित किया है। इस विषय मे तुम्हारी क्या इच्छा है।

पिता के प्रश्न से अंजना लजा गई और सभा मे से

उठकर अन्तःपुर की ओर चली गई ।

कन्या के विवाह के विषय मे कन्या से ही इस प्रकार प्रश्न करना क्या उचित है ? आज तो अपनी इच्छा के अनुसार ही सरक्षक अपनी सन्तान का विवाह कर देते हैं। अतएव विवाह के विषय मे कन्या की इच्छा जानने का विचार ही उत्पन्न नही होता। कन्या वयस्क और समझदार हो तो उससे विवाह सम्बन्धी प्रश्न पूछा जा सकता है; पर जहा बचपन मे ही कन्या का विवाह कर दिया जाता हो वहा इस विषय मे पूछताछ करने का सवाल ही खडा नही होता। जो कन्या इतनी अनजान होती है कि उसे यह भी मालूम नही होता कि विवाह क्या वस्तु है, वह अपने विवाह के विषय मे क्या सम्मति दे सकती है । प्राचीन काल मे छुटपन मे विवाह नही किया जाता था। उस समय 'ससविया, सरिसतया' इस शास्त्र पाठ के अनुसार कन्या और वर मे सब प्रकार की अनुरूपता देखी जाती थी । तभी वर और कन्या—दोनो की स्वीकृति से विवाह किया जाता था ।

पिता का प्रश्न सुनकर अजना लज्जित हो गई और राजसभा मे से उठकर चली गई । लज्जा के कारण वह न 'हा' कह सकी और न "नही" कह सकी । प्रजाजनो ने राजा से कहा– राजकुमारी ने लज्जा के वश विवाह के विषय मे उन्होने निषेध भी नही किया है । इससे यह नतीजा निकलता है कि पवनजी के साथ विवाह करना उन्हे स्वीकार है ।

अपने विवाह के विषय मे अजना के हा या ना न कहने के कारण राजा महेन्द्र भी यही समझा कि कन्या

को पवन के साथ विवाह करना स्वीकार है। अतएव उन्होने पवन के साथ अंजना की सगाई और साथ ही विवाह भी कर देने का निर्णय कर लिया।

सगाई के उपलक्ष्य मे राजा ने किसी भी प्रकार का बाह्य आडम्बर नही किया। उन्होने राजा प्रह्लाद के पास एक आमन्त्रण-पत्र भेजा कि मैं अपनी कन्या अंजना का विवाह आपके चिरजीवी पवनकुमार को लेकर मानसरोवर पर पधारें। हम निश्चित समय पर वही मिलेंगे।

राजा महेन्द्र का आमन्त्रण-पत्र राजा प्रह्लाद को मिला। यह शुभ समाचार जानकर वह अत्यन्त प्रसन्न हुए। अंजना बहुत अच्छी कन्या है। वह कुल का गौरव बढाएगी, इस प्रकार कहकर सभी लोग अंजना की प्रशंसा करने लगे।

२ : रंग में भंग

पवन को भी मालूम हुआ कि अंजना के साथ मेरे विवाह की बातचीत हो रही है। उसने लोगो से अंजना की प्रशसा सुनी। पवनकुमार ने किस उद्देश्य से अंजना को देखने का निश्चय किया, यह बात कथा ग्रथो मे दूसरे रूप में वर्णित की गई है, परन्तु पवनकुमार जैसे महापुरुष का स्त्री के प्रति इस प्रकार आकर्षित होना सगत नही जान पडता। अतएव यही कहना उचित प्रतीत होता है कि जब पवनकुमार ने अंजना की बहुत प्रशसा सुनी तो उसने सोचा— जिसकी इतनी अधिक प्रशसा सुनी जा रही है देखना चाहिए वह वास्तव मे कैसी है? जिसके साथ हमारा विवाह

किया जा रहा है उसके साथ जीवन व्यवहार भलीभाति निभ सकेगा या नही, इस विचार से प्रेरित होकर प्राचीन काल मे वर-वधू को और वधू–वर को देख लिया करते थे । इसी विचार को सामने रख कर पवनकुमार ने भी अ जना को देख लेने का विचार किया । उसने अपना यह विचार अपने मित्र प्रहस्त के सम्मुख प्रकट किया । पवन–कुमार का यह विचार जानकर प्रहस्त ने कहा—अगर आप यही चाहते हैं तो हानि क्या है ? हम लोग चलकर अ जना को देख आए गे ।

पवनकुमार विद्याधर थे । विद्याधरो के पास विमान होते हैं आज तो भौतिक विज्ञान से विमान चलते हैं, इस कारण विमान की बात पर लोगो को विश्वास हो जाता है । मगर पहले जव विमान की वात कही जाती थी तो सुनने वालो को आश्चर्य होता था । लोगो को भौतिक विज्ञान पर जितना विश्वास है उतना आध्यात्मिकता पर नही है यह खेद की वात है ।

एक दिन पवनकुमार अपने मित्र प्रहस्त के साथ विमान मे वैठ कर महेन्द्रपुर आये । अव उनके सामने यह समस्या उपस्थित हुई कि अ जना को किस प्रकार देखा जाय ? प्रकट रूप मे अ जना के पास पहुचना उन्हे अनुचित प्रतीत हुआ । प्रहस्त ने पवनकुमार से कहा—धीरज रखो । तुम्हारा मन स्वच्छ होगा तो तुम्हारी मनोकामना भी पूरी हो जाएगी ।

अ जना के विवाह की वात महेन्द्रपुर मे सव जगह फैल चुकी थी न [illegible] ख्रिया एक वगीचे मे बैठी इसी

विषय में बाते कर रही थी। प्रहस्त ने 'पवनकुमार से, उन स्त्रियो की तरफ इशारा करते कहा "पवनकुमार देखो, उन कन्याओ मे जो ताराओ मे चन्द्रमा की भाति दिखाई देती है, वही अंजनाकुमारी जान पडती है।" दोनो चुपके से उनकी बाते सुनने लगे।

उस समय अंजना की एक सखी, जिसका नाम वसन्तमाला था अंजना से कह रही थी—सखी बड़े ही आनन्द की बात है कि तुम्हारा विवाह पवनकुमार के साथ हो रहा है पवनकुमार युवक है, सुन्दर है और तुम्हारे ही समान धर्माभिमानी है। ऐसे सुन्दर पति का मिलना सौभाग्य की बात है।

वसन्तमाला ने यह कह कर पवनकुमार की प्रशसा की। पवनकुमार की प्रशसा सुनकर अंजना ने मुंह से कुछ कहा तो नही पर वह हसने लगी। अंजना को प्रसन्न देख कर उसकी सखिया समझ गई कि हमारी सखी पवनकुमार के साथ विवाह करने मे अत्यन्त प्रसन्न है।

वसन्तमाला की बात पूरी होने पर दूसरी सखी कहने लगी—सखी अंजना। अब तुम्हे पतिव्रत धर्म का पालन करना पड़ेगा। पतिव्रत धर्म सगाई होते ही प्रारम्भ हो जाता है। तुम्हारी सगाई हो चुकी है, अतएव अब तुम्हारे लिए यह पवित्र धर्म उत्पन्न हो चुका।

पतिव्रत धर्म का महत्त्व बहुत अधिक है। जो स्त्रिया पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन नही कर सकती, वे पतिव्रत धर्म का पालन करके भी आत्महित की साधना कर सकती है।

सीता पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन नही करती थी परन्तु पतिव्रत धर्म का पालन करती थी ।

जैसे स्त्रियो के लिए पतिव्रत धर्म है, उसी प्रकार पुरुषो के लिए भी पत्नीव्रत है । जिसमे पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करने की शक्ति नही है, उसे पतिव्रत या पत्नीव्रत पालन अवश्य करना चाहिये ।

अ जना और उसकी सखिया बगीचे मे बैठकर नि सकोच भाव से आनन्दपूर्वक वार्तालाप कर रही थी । वार्तालाप मे प्राय दो पक्ष पैदा हो जाते है । तदनुसार अ जना के विवाह-सम्वन्ध मे भी उसकी सखियो मे दो पक्ष खडे हो गये । दूसरे पक्ष मे मिश्रकेशी नाम की सखी थी । उसने कहा—हमारी सखी का विवाह विद्युत्प्रभ के साथ न होकर पवनकुमार के साथ हो रहा है यह कोई सौभाग्य की बात नही हैं । विद्युत्प्रभ जैसा महापुरुष है पवनकुमार उसका मुकाबिला नही कर सकते । समुद्र और जल की बू द मे जितना अन्तर है, उतना ही अन्तर विद्युत्प्रभ और पवन–कुमार मे है ।

मिश्रकेशी के इस कथन के उत्तर मे तीसरी सखी ने कहा - विद्यत्प्रभ कैसा ही क्यो न हो, वह अल्पायुष्य है । उसके विषय मे भविष्यवाणी सुनी जाती है कि वह अठारह वर्ष की उम्र मे दीक्षा धारण करेगा और २६ वर्ष की उम्र मे मुक्ति प्राप्त करेगा । ऐसे अल्पायु पुरुष के साथ विवाह करने वाली को वैधव्य की यातना भुगतनी पडेगी ।

चौथी सखी ने प्रतिवाद करते हुए कहा—जिसने मोक्ष प्राप्त किया हो, उस मुक्त पुरुष की विधवा होने मे हर्ज ही

क्या है । मोक्षगामी महापुरुष की पत्नी वनकर थोड़े ही दि
तक सुहागिन और अधिक समय तक विधवा रहना अच्छ
ही है । चन्दन की लकडी का एक टुकडा भी अच्छा ह
होता है । दूसरी एक गाडी भर लकडी क्या इस टुकडे के
वरावरी कर सकती है ? इसी प्रकार विद्युत्प्रभ भले ही
अल्पायुष्य हो, अगर वह मोक्षगामी है तो ऐसे महापुरुष
को थोडे दिनो की सेवा भी हितकर ही कहलाएगी ।

अंजना सखियो की वातचीत चुपचाप सुन रही थी। उसने किसी की वात मे भाग नही लिया और न किसी तरफ रुचि प्रदर्शित की । अजना को मौन देखकर पवन-कुमार उस पर क्रुद्ध हुए । वह मन ही मन सोचने लगे–कैसी है । यह अजना जो पर-पुरुप की प्रशसा और जिस के साथ हो चुकी है उसकी निन्दा सुनकर भी चुपचाप वैठी है । जो स्त्री अपने पति की निन्दा सुनकर भी चुपचाप वैठी रहती है, वह किस काम की ?

पवनकुमार इस विचार से सहसा उत्तेजित हो उठा । वह परिस्थिति को भूल गया और अपने आपको सम्भालने मे असमर्थ हो गया । उत्तेजना के वश होकर वह अजना और निन्दा करने वाली उसकी सखी पर तलवार का प्रहार करने के लिए तत्पर हो गया ।

पवनकुमार आपे मे वाहर ही म्यान मे से तलवार निकाल कर जव अजना और उसकी सखी पर वार करने चला, तव प्रहस्त ने कहा "अरे, करते क्या हो ? कहा जा रहे हो ? जरा खडे रहो और विचार करो ।"

पवन०—सुनते नही हो किस प्रकार मेरी निन्दा की

जा रही है ? फिर भी अंजना चुपचाप बैठी रही। वह शांति के साथ मेरी निन्दा और पर-पुरुष की प्रशंसा सुन रही है। मैं अंजना को और उस निन्दा करने वाली स्त्री को दण्ड दिए बिना नहीं रहूंगा।

प्रहस्त—जरा शांति रखो। इतने उतावले मत होओ। पहली बात तो यह है कि स्त्री अवध्य है। कोई स्त्री कैसा ही अपराध क्यो न करे, फिर भी उसे मार डालना योग्य नही है, क्योंकि स्त्री अबला होती है। इसके अतिरिक्त अंजना तो निर्दोष भी है। उसने अपनी सखी की बात का समर्थन नही किया है। अंजना की सखी सिर्फ बोली है और तुम वीर पुरुष होकर एक अबला स्त्री पर प्रहार करने को तैयार हो गए हो। यह क्या उचित है ? जरा शांतिपूर्वक विचार करो इस प्रकार उच्छृङ्खल बन जाना तुम्हे शोभा नहीं देता।

सच्चा मित्र वही है जो अपने मित्र को अनुचित मार्ग करने से रोकता है। खराब मार्ग पर ले जाने वाला मित्र नही, शत्रु है। प्रहस्त पवनकुमार का सच्चा शुभचिन्तक मित्र था। उसने पवनकुमार को समझा कर शांत किया और दोनो विमान मे बैठकर अपने स्थान पर चले गये।

पवनकुमार के मन से यह बात नही निकलती थी कि जो स्त्री मेरी निंदा और पर पुरुष की प्रशंसा सुनकर चुप बैठी रहती है, वह मेरे लिए किस काम की ? ऐसी स्त्री के साथ विवाह करने से क्या लाभ होगा ? ? 'प्रथमग्रासे मक्षिकापात.' वाली बात हुई।

पवनकुमार ने अपने हृदय के विचार अपने मित्र प्रहस्त के सामने प्रकट किये। प्रहस्त ने कहा—

विचार करोगे तो प्रत्येक स्त्री मे कोई न कोई दोष नजर आएगा । अगर तुम्हे ऐसी मामली बातो से ही असन्तुष्ट होना है तो तुम्हारे लिए सयम धारण करना ही योग्य है।

पवन—अभी संयम धारण करने की योग्यता मुझ मे नही ।

प्रहस्त—अगर संयम धारण करने की क्षमता—तुम्हारे भीतर नही है तो फिर अंजनाकुमारी के साथ ही विवाह करना योग्य है । किसी दूसरी स्त्री के साथ विवाह करना उचित नही है । तुम्हारी स्वीकृति लेने के बाद ही पिताजी ने अंजना के साथ सम्बन्ध करना स्वीकार किया है। माता-पिता जो वचन दे चुके हैं, उसका पूरी तरह निर्वाह करना तुम्हारा कर्त्तव्य है ।

इस प्रकार प्रहस्त के बहुत कुछ समझाने—बुझाने पर पवनकुमार ने अंजना के साथ विवाह करना स्वीकार किया । परन्तु उसके दिल मे यह भावना बनी ही रही कि विवाह के बाद अब अंजना जब मेरी हो जाएगी, तब उससे बदला लिये बिना नही रहूगा ।

पवनकुमार के मन मे इस प्रकार कपटभाव आ जाने के कारण इतनी हानि हुई और जब सरलता आ गई तो कितना लाभ हुआ, विषय पर फिर प्रकाश डाला जाएगा।

जो व्यक्ति माथे आई हुई विपत्तियो को भी सम्पत्ति बना लेता है, वह आत्मोद्धार करने के साथ-साथ जगत् के समक्ष एक उच्चादर्श भी उपस्थित कर जाता है । कीड़ो-मकोड़ो की तरह जीवन व्यतीत करने वाले तो जगत् मे

बहुत मिलेंगे पर उन्ही का जीवन उच्चादर्श तथा सफल गिना जाता है जिनका जीवन दूसरो के लिये अनुकरणीय बनता है। जिनके जीवन प्रसगो से आत्मविकास के तत्त्व फूट निकलते हैं, उनका जीवन धन्य हैं। ऐसे जीवन का बखान करना और सुनना लाभप्रद ही है। सती अंजना का जीवनचरित भी आत्मविकास के तत्त्वों से ओतप्रोत है। अतएव उसके जीवव चरित को एकाग्रचित्त होकर सुनने वालों और थोड-बहुत अंशो मे भी अनुकरण करने वाली को अवश्य ही आत्म लाभ होगा।

सती अजना मे कितना अथाह धीरज था, यह बात उसके जीवन की घटनाओ से भलीभाति जानी जा सकती है।

मिश्रकेशी द्वारा की गई विद्युत्प्रभ की प्रशसा सुनकर अजना चुप क्यो रही ? इसका कारण यह था कि अजना महापुरुषो की प्रशसा मे विघ्न-बाधा उपस्थित नही करना चाहती थी। लेकिन बेचारी अजना को क्या पता था कि उसके मौन का क्या परिणाम होने वाला है ?

मिश्रकेशी द्वारा की गई विद्युत्प्रभ की प्रशसा सुनकर भी मौन रहने के कारण ही पवनकुमार अजना पर क्रोधित हुआ था यहा तक की क्रोध के आवेश मे वह दोनों के प्राण ले लेने के लिए भी उद्यत हो गया था। परन्तु प्रहस्त ने उसे समझा-बुझा कर शान्त कर दिया। पवन-कुमार उस समय शान्त हो गया पर उसके हृदय का डक दूर नही हुआ। अजना के साथ विवाह न करने का उसने विचार किया था, पर प्रहस्त के कहने से उसे विवाह के लिए भी राजी होना पडा। राजी तो वह हो गया मगर

अन्तःकरण की प्रेरणा जा आकर्षण से नही, वल्कि अंजना से उसके मौन का वदला लेने के उद्देश्य से। विवाह किए विना अन्जना को वह उसके अपराध का दंड नही दे सकता था और विवाह करने पर दण्ड देना सरल हो जायगा। कुछ-कुछ पिताजी के वचन का निर्वाह करना भी उसके लिए आवश्यक था। इन्ही सव कारणो से उसने इस विवाह का विरोध नही किया। उसने सोचा—मैं अन्जना के साथ विवाह कर लूंगा तो मित्र के आग्रह की रक्षा हो जायगी, माता-पिता की आज्ञा का पालन हो जायगा और अन्जना को उसके अपराध की सजा भी दी जा सकेगी।

पवनकुमार की यह भावना यद्यपि प्रशस्त नही कही जा सकती परन्तु विवाह कर लेने के वाद उसमे जो दृढ़ता रही, उस दृढता के कारण उसका यह दुर्भाव भाव गौण हो गया।

४ : विवाह

पवनकुमार के विवाह की तैयारी होने लगी। राजा प्रह्लाद ने वडे चाव से उसे दूल्हा वनाया और साथ लेकर मानसरोवर पर पहुंचा। इधर महेन्द्र भी अजना के साथ वहां आ पहुंचा। पवन के साथ अन्जना का विवाह सम्वन्ध आनन्द के साथ स्थापित हो गया। पवनकुमार ने विवाह तो कर लिया लेकिन विवाह के समय वर मे जो प्रसन्नता और प्रमोद दिखाई देता है, उसका कोई भी चिन्ह उसके चेहरे पर दिखाई न दिया।

राजा महेन्द्र और राजा प्रह्लाद दोनो साधारण राजा नही थे। उनकी सन्तानो का यह पहला विवाह हो रहा

था। फिर भी उन्होने तीन ही दिनों में विवाह का सारा काम-काज अत्यन्त सादगी के साथ निबटा दिया। आज विवाह के नाम पर कितना समय नष्ट किया जाता है! एक विवाह के-लिये लोग अपना और अपने सम्बन्धियो का महीना भर बिगाड देते है। यह सब समय को कीमत न समझने का परिणाम है। पहले के लोग समय का मूल्य समझते थे। और इसी कारण राजा जैसे असाधारण लोग भी तीन दिन मे विवाह कार्य निपटा लेते थे। विवाह के नाम पर जो समय वृथा नष्ट किया जाता है, वह अगर बचा लिया जाय और धर्म-कार्य मे उसे व्यय किया जाय तो क्या विवाह का काम रुक जायगा? क्या थोडे समय मे विवाह नही हो सकता? अगर हो सकता है तो फिर समय को निरर्थक नष्ट करना कौनसी बुद्धिमत्ता है?

गृहस्थ चाहे तो पग-पग पर धर्म का आराधन कर सकते है पर लोगो की समझ तो यह हो गई है कि जब तक उपाश्रय या धर्मस्थान मे रहे तभी तक धर्म हो सकता है। धर्मस्थान से बाहर निकलने के बाद तो पाप ही पाप करना शेष रह जाता है। इस भ्रमपूर्ण मान्यता के कारण कितनी हानि हो रही है, इसका वर्णन करना कठिन है। तुम समझते हो कि धर्म सिर्फ उपाश्रय मे ही हो सकता है तो क्या दुकान पर बैठने से श्रावक, श्रावक नही रहता? अहिंसा, सत्य आदि श्रावक के जो स्थूल, व्रत हैं उनका पालन तो व्यवहार मे ही हो सकता है। ऐसी स्थिति मे यह समझना कि धर्म सिर्फ उपाश्रय मे ही हो सकता है कितना भ्रमपूर्ण है।

राजा महेन्द्र ने सादगी के साथ पवनकुमार व अजना

का विवाह कर दिया। उसने अपनी शक्ति के अनुसार दहेज भी दिया। राजा प्रह्लाद अपने पुत्र और अपनी पुत्रवधू को लेकर घर आया प्रह्लाद और उनकी रानी केतुमति अंजना को देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। अंजना अपने नये घर मे आई। उसने सास और ससुर के चरणो मे यथोचित नम्रता के साथ सिर झुकाया।

५ : पतिगृह में

अजना के शील-स्वभाव में कोई त्रुटि नही थी। उसके सभी व्यवहार वैसे ही थे जैसे एक उच्चकुल की आदर्श गृहिणी के होने चाहिए। अतएव अंजना पर सभी प्रसन्न थे। अप्रसन्न था तो केवल पवनकुमार, जो पूर्व वैर से प्रेरित था। राजा प्रह्लाद ने अंजना के लिए एक सुन्दर महल बनवा दिया था। पवनकुमार को यह बात रुचिकर नही हुई। वह सोचता—पिताजी ने इसके लिए इतना सुन्दर महल क्यो बनवा दिया है? इसकी आवश्यकता ही क्या थी? फिर उसने विचार किया—मगर पिताजी को क्या पता है कि मुझे यह पत्नी पसन्द नही है अथवा इसके प्रति मेरे हृदय मे वैर-भाव छिपा है। यह बात मालूम न होने के कारण वे अजना का आदर करे, उस पर स्नेह रखे, यह स्वाभाविक है। परन्तु मैं किसी अवस्था मे अजना को प्रेम नही कर सकता। मैं अजना को अन्त करण से त्याग चुका हू। पवनकुमार अजना का मुंह तक नही देखते थे। अजना की समझ मे नही आता था कि आखिर पति की अप्रसन्नता का क्या कारण है? फिर भी वह स्वभाव से

गम्भीर, कुलीन, विवेकशील और धैर्यवाली थी । वह धीरज के साथ अपना समय व्यतीत कर रही थी, कभी-कभी वह सोचा करती–ऐसा क्या अपराध मैंने किया है कि मेरे पतिदेव मुझ पर इतने अधिक रुष्ट रहते हैं ? इस जन्म मे तो मैंने कोई अपराध नही किया है । हा, पहले के जन्म मे कोई अपराध अवश्य किया होगा, जिसका फल मुझे इस समय भुगतना पड रहा है । किये हुए कर्मों का फल भोगना ही पडता है, बिना भोगे छुटकारा नही ।

श्री उत्तराध्ययन सूत्र मे कहा है—

कडाण कम्माण न मोक्ख अत्थि

अर्थात् किए हुए कर्मों को भोगे बिना छुटकारा नही । इसी प्रकार श्री भागवती सूत्र मे भी कहा है—

प्र०—भगव ! सकडा कम्मा वेदन्ति परकडा ?

उ०—गोयमा ! सकडा कम्पा वेदन्ति, नो परकडा ।

अर्थात् गौतम स्वामी ने प्रश्न किया ! भगवन् ! स्वकृत कर्म भोगने पडते हैं या परकृत ? इस प्रश्न के उत्तर मे भगवान् ने फरमाया—हे गौतम अपने किए कर्म ही भोगने पडते हैं, दूसरे के कर्म नही भोगने पड़ते ।

इस प्रकार अ जना यह विचार करके धैर्य धारण करती थी कि "मैंने पूर्व जन्म मे कोई अपराध किया है और उसके फलस्वरूप ही मेरे पतिदेव मुझ पर अप्रसन्न रहते है ।" इस तरह के विचार से अ जना को धीरज तो बधता था फिर भी स्त्री का हृदय जो ठहरा । कभी-कभी उसके हृदय मे वेदना होती और तब वह उदास हो जाती थी ।

एक बार अंजना विचार मग्न उदासीन बैठी थी। उसी समय उसकी सखी वसन्तमाला उसके पास आकर कहने लगी सखी ! तुम इतनी ज्यादा उदास क्यो रहती हो ? तुमने कोई अपराध तो किया नही है फिर भी राजकुमार तुमसे इतने अप्रसन्न क्यो रहते हैं ? यह तो पुरुषो का साफ अन्याय ही कहा जा सकता है ? राजकुमार तुम्हारे प्रति जो अन्याय कर रहे है, उसका परिणाम उनके हक मे भी अच्छा नही होगा—वरन् बुरा ही होगा।

सखी के इस कथन के उत्तर मे अंजना ने कहा—वहिन ! ऐसा मत कहो। पति के अनिष्ट का विचार भी मैं नही कर सकती। उनका अनिष्ठ चाहने मे मेरा ही अनिष्ट है। मैंने अवश्य ही पूर्वजन्म मे कोई अपराध किया होगा इसी कारण तो पतिदेव मुझ पर नाराज रहते है। अपने किए कर्मों का फल मुझे भोगना ही चाहिए। अगर मैं पवित्र हूं तो मुझे पवित्र ही रहना चाहिए। कैसी भी परिस्थिति क्यो न उपस्थित हो, मुझे अपने अन्त.करण मे अपवित्रता का प्रवेश नही होने देना चाहिए। कचन आग मे तपाया जाता है और फिर पीटा जाता है, फिर भी वह कंचन ही बना रहता है। ईख कोल्हूमे पील दी जाती है फिर भी मिठास ही देती है, कटुवास नही। इसी प्रकार मुझ पर चाहे जैसी विपदा आ जाए फिर भी मुझे पति का अनिष्ट नही सोचना है। मै तो पति की कुशल-कामना ही करती हूं और स्वय पवित्र रहना चाहती हू। कष्टो से घबरा कर पति का अनिष्ट चाहूगी तो मेरा ही अनिष्ट होगा। मै पति पर स्वप्न मे भी क्रोध नही करना चाहती। मेरे इस भव के पतिदेव तो वही है—दूसरा कोई नही हो

सकता। मैंने अपना यह जीवन उन्ही के चरणो में समर्पित कर दिया है। ऐसी स्थिति मे स्वप्न मे भी मैं उनका अनिष्ट नही चाहती।

अजना इस प्रकार के सद्विचारो द्वारा पतिदेव की कुशल कामना करती और अपनी उदासीनता मिटाती थी। अजना के महल मे एक ऐसी खिडकी थी, जिसके द्वारा वह प्रतिदिन पतिदेव के दर्शन कर लेती थी। एक बार पवन-कुमार ने अजना को अपने दर्शन करते देख लिया। खिडकी द्वारा अपने दर्शन करते देखकर पवन सोचने लगा—'यह स्त्री तो मेरा पिन्ड ही नही छोडती।' और उसने वह खिड़की बन्द करवा दी।

यह एक ऐसी घटना थी कि अजना के हृदय मे क्रोध उत्पन्न हो सकता था। परन्तु उसने हिम्मत के साथ अपने दिल पर काबू किया और तनिक भी क्रोध न उत्पन्न होने दिया। वह सोचने लगी-यह तो मेरी परीक्षा हो रही है। मुझे साहस नही खोना चाहिये और इस परीक्षा मे उत्तीर्ण होना चाहिए।

राजकुमार का घोर अन्याय देखकर बसन्तमाला से फिर न रहा गया। वह अजना से कहने लगी—सखी! तुम धर्म का विचार करके राजकुमार के अपराधो को क्षमा कर रही हो और उनकी मगल-कामना करती हो, मगर राजकुमार के अन्याय की हद हो गई है। उन्होने महल की खिडकी भी बन्द करा दी है। उनका यह व्यवहार कितना अनुचित है।

शाति के साथ अजना बोली—सखी! उन्होने जो

किया सो ठीक ही किया है। अगर मेरे हृदय मे पति के प्रति सच्चा प्रेम है - अगर मेरे पति मेरे अन्तःकरण मे मौजूद हैं तो फिर खिड़की के द्वारा उनका चेहरा देखने की आवश्यकता है ही क्या है ? मैं अपने हृदय मे विराजमान हृदयदेव के दर्शन विना खिड़की ही बन्द कर लूगी। अतएव उन्होने अगर खिड़की बन्द करवा दी है तो भी कोई हर्ज की बात नही !

इस प्रकार पति द्वारा परित्यक्ता अजना धैर्य के साथ विपत्ति को भी सम्पत्ति मान रही है। जो व्यक्ति विपत्ति और सम्पत्ति के समय अपना मन शान्त रखते हैं हर्ष और विषाद से अपने मन को अभिभूत नही होने देते, वह अवश्य ही कल्याण के भागी होते है। अतएव सती अजना का यह चरित्र अनुकरणीय है।

विना किसी उचित कारण के अजना का परित्याग करने के लिये पवनकुमार को दोषी और निन्दा पात्र कहा जा सकता है। किन्तु अजना का तिरस्कार करने के साथ उसने एक प्रशसनीय कार्य भी किया। उस कार्य से पवन-कुमार को प्रशसा का पात्र भी माना जा सकता है। हमे दूसरों के दोष ही नही देखने चाहिये।

पवन राजकुमार थे। उन्हे अनायास ही दूसरी कन्या मिल सकती थी। अजना के प्रति रुष्ट और असन्तुष्ट होने के कारण दूसरी कन्या के साथ विवाह कर लेना उनके लिए कोई बडी वात नही थी। उनके मित्रो ने दूसरा विवाह कर लेने के लिये पवनकुमार को प्रेरित भी किया होगा लेकिन उन्होने यही उत्तर दिया होगा—जब मै एक

स्त्री का चरित्र देख चुका हू तो फिर दूसरा विवाह करके अंजना की तरह दूसरी स्त्री का भी जीवन क्यो नष्ट करूं ? ऐसा करने का क्या अधिकार है ? किसी स्त्री को सकट मे डालने की अपेक्षा क्या यही अधिक हितकर नही होगा कि मैं स्वयं शुद्ध बनूं ?

हम पुरुष हैं और वह स्त्री है, इस प्रकार अभिमान से प्रेरित होकर आज बहुत से पुरुष स्त्रियों पर अत्याचार करते हैं। किन्तु जैन धर्म के अनुसार स्त्री और पुरुष के अधिकार समान हैं। किसी को किसी का अधिकार छीन लेने का हक नही है।

पवनकुमार अ जना पर रुष्ट तो थे फिर भी क्रोध के आवेश मे आकर उन्होने दूसरा विवाह नही किया। वह ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करने लगे। वास्तव में यह कितना ऊ चा आदर्श है ! आज के पुरुष तो यह कहने को तैयार हो जाते हैं कि पुरुष होने के कारण हमें चाहे जितनी बार विवाह करने का अधिकार प्राप्त है। इस प्रकार कहने वाले सिर्फ स्त्री को ही पवित्र रखना चाहते हैं। उन्हे स्वयं पवित्र रहने की आवश्यकता प्रतीत नही होती। मगर जो स्वय पवित्र नही है, उसे दूसरो को पवित्र रखने का अधिकारी कैसे माना जा सकता है ?

मैं आपको सदाचार के पालन का उपदेश देता हू। लेकिन मेरा खुद का ही जीवन पवित्र सयममय न हो तो ऐसी दशा मे आप मुझे क्या कहेगे ? आप यही कहेगे— महाराज ! पहले अपना आचरण तो सम्भालो। तात्पर्य यह है कि जो स्वयं पवित्र नही है, वह दूसरो को पवित्र नही

रख सकता । इस कथन आ आशय यह यही कि आ
हमारे सयम का बराबर ध्यान न रखे । आप साधुवर्ग के
संयम का बराबर ध्यान रखे और साथ ही साथ अपनी
पवित्रता का सरक्षण और पालन करें । आपको अपने गृहस्थ
धर्म का पालन करना चाहिए । साधु को श्रावक का और
श्रावक को साधु का ध्यान रखना चाहिए । ऐसा करने से
दोनो के धर्म का यथा योग्य पालन होगा । अलवत्ता इस
कथन का आशय यह नही समझना चाहिए कि दोनो मे से
एक वर्ग अगर अपने धर्म का यशोचित पालन न करे तो
दूसरे वर्ग को भी नही पालना चाहिए । दूसरे अपने धर्म
का पालन करे या न करे फिर भी हमे तो अपने धर्म का
पालन करना ही चाहिए ।

प्रत्येक मनुष्य का यह कर्त्तव्य है कि वह केवल स्वार्थ
का ही साधन न करे वरन् परमार्थ का भी आराधन क
पवनकुमार सोच सकते थे कि मैं पुरुष हू और पुरुषो मे
रामकुमार हू । अ जना अपने कर्मो का फल भुगत रही
तो भुगते । मैं स्त्री-सुख से वचित क्यो रहू ? लेकिन पवन-
कुमार ने ऐसा स्वार्थपूर्ण विचार न करके ब्रह्मचर्य का ही
शुद्ध रूप से पालन किया ।

साधारणतया लोग अपने विषय मे जो बात सोचते
हैं वही दूसरो के विपय मे नही सोचते । इसी कारण घोर
अन्याय हो जाता है । आज पुरुषो मे यह पद्धति प्रचलित हो
गई है कि वे अपना स्वार्थ देखते हैं । उन्हे लेशमात्र भी
यह विचार नही आता कि जो काम स्वय उन्हे पसन्द नही
हैं वह स्त्रियो को कैसे पसन्द आता होगा ? इस विषय मे

गुलिश्तां में एक कथा कही गई है। उसमें कहा है—

एक अमीर की स्त्री मर गई। अमीर से मित्रो ने उससे कहा—तुम्हारे पास अखूट धन-सम्पत्ति है। तुम दूसरा विवाह करलो।

अमीर ने कहा—मुझे बूढी स्त्री पसन्द नही है।

मित्र—यह कौन कहता है कि तुम बुढ़िया के साथ विवाह करो। किसी नवयुवती के साथ शादी करलो। तुम्हे किस चीज की कमी है ?

अमीर—तुम मेरे कहने का मतलब नही समझे। मेरे कहने का आशय यह है जब मुझे बूढी स्त्री पसन्द नही है तो नवयुवती स्त्री को मुझ जैसा बूढा क्यो पसन्द आने लगा। मैं अपना ही मतलब समझू और दूसरो के हिताहित का विचार न करू, यह किस प्रकार उचित कहा जा सकता है ?

क्या आपको अमीर की बात युक्तिसगत जान पडती हैं ? अगर वास्तव मे आप अमीर के कथन को सत्य और न्यायसगत समझते हैं तो आपको विवाह सम्बन्धी अन्यायपूर्ण कार्यों मे कदापि भाग नही लेना चाहिए। जहा किसी वृद्ध का तरुणी के साथ विवाह होता हो, वहा आपको सम्मिलित नही होना चाहिए। वृद्ध-विवाह मे भाग लेने से तुम पाप के भागी होते हो और उसमे अपना सहयोग न देकर अपने आपको पाप से बचा सकते हो।

पवनकुमार के मित्र जब दूसरा विवाह करने का आग्रह करते तब वह इस आशय का उत्तर देते—पर-पुरुष

की प्रशंसा सुनकर कुछ भी न बोलना—मौन रहना, यह अजना का व्यवहार मैं सहन नही कर सका तो अंजना यह कैसे सहन कर सकेगी कि मैं दूसरी स्त्री के साथ विवाह कर लूं। ऐसी दशा मे दूसरी स्त्री के साथ विवाह करना मेरे लिए उचित नही है।

दूसरा विवाह न करने की पवनकुमार की दृढता से अंजना को भी पर्याप्त आश्वासन मिलता था—कहना चाहिए कि एक प्रकार से वह प्रसन्न रहती थी। वह सोचती—भले ही राजकुमार मुझ पर रुष्ट होते हैं फिर भी शील का पालन करने मे तो वह दृढ ही हैं। अंजना दिन भर इसी प्रकार सोचती-सोचती अपना समय व्यतीत करती थी। रात्रि मे वह आत्मालोचन करती। वह सोचती रहती है कि मुझसे ऐसा कौनसा अपराध बन गया है, जिसके कारण पतिदेव मुझसे रुष्ट रहते हैं ? बहुत कुछ सोचने-विचारने पर भी पति के रोष का कोई कारण वह सोच नही पाती थी। अन्त मे वह इसी नतीजे पर पहुचती थी कि पूर्वजन्म मे किये हुए किसी पापकर्म के कारण ही मुझे यह कटुक फल भोगना पड रहा है। और वह सत्कार्य एव सद्विचार में ही प्रवृत्त रहती थी।

कभी-कभी अजना को सखी बसन्तमाला पवनकुमार की अप्रसन्नता के विषय मे कुछ कहती अथवा पवनकुमार की निन्दा करने लगती तो वह उसे ऐसा कहने से रोक देती और कहती सखी, पति की निन्दा मत करो। भले ही वे मुझ से रुष्ट हैं, फिर भी वे मेरे पति देव हैं। मैंने अपना जीवन उनकी सेवा मे समर्पित किया है। तू कहती

है कि ऐसा दु.खमय जीवन व्यतीत करने की अपेक्षा तो पिता के घर अविवाहित रहना ही अच्छा था। मगर तेरा यह कथन भ्रमपूर्ण है, क्योकि पिता के घर से यहा आने की भावना मैंने ही की थी। पिताजी ने जबरदस्ती से मुझे घर से नही निकाला है। जब मैंने विवाह करने की स्वीकृति दी, तभी मेरा विवाह किया गया था। पिताजी ने मेरे जीवन को पवित्र एव सुखी बनाने की दृष्टि से ही मेरा विवाह किया था। अब अगर मुझे पति द्वारा परित्यक्त होकर रहना पडता है तो इसमे किसी का अपराध नही है मुझे यह अपने ही पाप कर्म का फल जान पडता है। मुझे तो पति के रुष्ट होने के कारण ही ब्रह्मचर्य का पालन करना पडता है परन्तु वे महासतिया कितनी पवित्र और सुशील थी जो स्वेच्छापूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करके अपना जीवन धन्य मानती थी।

ब्राह्मी चन्दनबालिका भगवती रात्रीमती द्रौपदी,
कौशल्या व मृगावती च सुलसा सीता सभद्रा शिवा।।
कुन्ती शीलवती नलस्य दयिता चूला प्रभावत्यपि,
पद्मावत्यापि सुन्दरी दिनमुखे कुर्वन्तु वो मंगलम्।।

इन महासतियो ने स्वेच्छा से ब्रह्मचर्य का विशुद्ध पालन किया था। यही कारण है कि प्रातःकाल इनका स्मरण किया जाता है।

अंजना ने बसन्तमाला को समझाते हुए कहा—बहिन! पतिदेव मुझ पर रुष्ट हैं और इस कारण मेरा जीवन दु'खी है, यह बात सच है। लेकिन पति के रुष्ट होने के कारण मैं ब्रह्मचर्य का पालन कर रही हू, यह भी क्या बुरा है?

पति चाहे तो दूसरी कुमारी के साथ विवाह कर सकते, लेकिन जैसे भगवान् नेमिनाथ ने राजमती का त्याग करके अन्य स्त्री के साथ विवाह नही किया था, उसी प्रकार मेरे पति ने भी किसी दूसरी स्त्री के साथ विवाह करने का विचार नही किया है तो फिर भी मैं राजमती के समान ब्रह्मचर्य का पालन क्यो न करूं !

अंजना इस प्रकार अपनी सखी को समझा कर शांत करती और आप स्वय भली भाति ब्रह्मचर्य का पालन करती एवं परमात्मा के ध्यान मे जीवन व्यतीत करती । अंजना चाहती तो पिता के घर जा सकती थी । पर उसने ऐसा नही किया । वह एक-दो वर्ष नही, बाईस वर्ष तक ब्रह्मचर्य का यथावत् पालन करती रही ।

अजना की सखिया उससे कहती—आपकी भावना इतनी ऊची है कि यह दुख अधिक समय तक बना नही रह सकता । थोड़े ही समय मे आपके दुख का अन्त अवश्य होगा ।

सखियो के इस सान्त्वनापूर्ण कथन के उत्तर मे अंजना कहती—सखियो ! तुम्हारे ऐसे वचनो से मुझे धैर्य प्राप्त हो, यही मैं चाहती हू ।

इस प्रकार पवनकुमार और अजना—दोनो ही ब्रह्मचर्य का पालन कर रहे थे । पवनकुमार ने सुविधा होते हुए भी विवाह नही किया और अंजना ने इस परिस्थिति के लिए अपने कृत कर्मों को उत्तरदायी समझा ।

वास्तव मे कर्मों का नियम इतना अटल है कि उसमे

जरा भी फेरफार नही हो सकता । कर्मों के विषय में यह नियम है कि जो कर्म किए जा चुके हैं, उन्हे प्रदेश अथवा विपाक से भोगना ही पडता है । शास्त्र मे कहा है—

कडाण कम्माण न मोक्ख अत्थि !

अर्थात्—कि ये कर्मों को भोगे बिना छुटकारा नही ।

इस प्रकार जब किये कर्म भुगतने ही पडते हैं तो हायतोबा मचाते हुए क्यो भोगना चाहिए ? दु ख के समय आर्त्तध्यान करने से क्या लाभ है ? बिजली के लट्टू मे जो प्रकाश आता है वह "पावर हाऊस" अर्थात् विजली से ही आता है । "पावर हाऊस" मे प्रकाश न आता तो लट्टू मे वह कहा से होता ? इसी प्रकार जो भी सुख या दु ख आता है वह अपने किए कर्मों के कारण ही आता है । जो अज्ञानी है, वे सुख आने से प्रसन्न होते हैं और दु ख आ पडने पर विषाद से घिरे जाते है । वे मानते हैं कि वह सुख और दु ख मे समभाव रखते हैं । वे मानते है कि यह सुख या दु ख मेरे कर्म रूपी "पावर हाऊस" मे से ही आया है । इस विचार के प्रभाव से ज्ञानी पुरुष सुख के समय फूल नही जाते और दु ख के समय घबराते नही है ।

अ जना भी इस प्रकार कर्मफल का विचार करके धैर्य-पूर्वक वियोग को सहन कर रही थी । उसका धैर्य और उच्च भावना देखकर उसकी सखिया कहा करती थी कि—सखी ! तुम धन्य हो, पवित्र हो । तुम्हारा धैर्य और पवित्र भाव शीघ्र ही इस दु ख को समाप्त कर देगा ।

इस प्रकार जीवन व्यतीत करते-करते बाईस वर्ष व्यतीत हो गये । इन बाईस वर्षों मे उनके मन मे न तो

दुर्भावना उत्पन्न हुई और न पवनकुमार के ऊपर उसे क्रोध ही चढ़ा। कहा जा सकता है कि लगातार बाईस वर्षों तक अंजना ने इतना दुःख कैसे सहन किया होगा ? लोगो को इतने लम्बे समय तक ऐसा कष्ट भोगना बहुत कठिन जान पड़ता है, पर नरक मे रहकर कितने समय तक और कैसा कष्ट भोगा है, यह बात क्यो भूल जाते हो। जब सागरोपम वर्षों तक घोरतर वेदना सहन की है तो थोडे दिनो तक इतना कष्ट सहना कौन-सी बड़ी बात हुई ?

इस प्रकार का विचार करके ज्ञानीजन दुख आ पडने पर धैर्य धारण करते हैं और घबराते नही है। अंजना विचारशील रमणी थी, अत उसने बाईस वर्ष तक धैर्य के साथ दुख सहन किया। अब ऐसा जान पड़ता था कि उसके दुःख का अन्त आ रहा है। परन्तु प्रत्येक काम निमित्त कारण से ही पूरा होता है—बिना निमित्त मिले कोई काम नही होता। इस नियम के अनुसार यहा भी निमित्त मिलने की देरी थी। सयोगवश एक ऐसा निमित्त मिल गया जिससे अंजना का दुख दूर हो गया।

६ : घोर अपमान

राजा रावण के मन मे एक बार विचार आया कि और तो सभी राजा मेरे सामने झुकते हैं, सिर्फ एक वरुण राजा ही ऐसा है जो अपना सिर ऊंचा उठाये हैं। जब तक वरुण को मैं अपने सामने नही नमाता, तब तक मैं सर्वोपरि राजा कैसे कहला सकता हू।

यह विचार आते ही रावण ने वरुण के पास दूत भेज

दिया। दूत से कहला भेजा—या तो तुम राजा रावण के सामने झुको या युद्ध करने के लिए तैयार हो जाओ। दूत ने वरुण को रावण का सवाद कह दिया।

वरुण ने उत्तर दिया—रावण राक्षस है और मैं दैवी प्रकृतिवाला हू। इस कारण मैं रावण के सामने नम नही सकता।

वरुण का उत्तर पाकर दूत रवाना हो गया। उसके रवाना होने के बाद वरुण ने अपने पुत्रो को बुलाया और कहा—रावण राक्षस तो है परन्तु वह पराक्रमी और बलवान है। ऐसी स्थिति मे हमे क्या करना चाहिए ?

पुत्रो ने वरुण से कहा—पिताजी ! आप इस बात की चिता न करें। हम रावण को समझाने का प्रयत्न करेगे।

वरुण के पुत्र राजा रावण को समझाने गये। उन्होने रावण से कहा—आप वरुणराज को किस उद्देश्य से बुलाना चाहते हैं ?

रावण—मैं महाराज हू। सभी राजा मुझे नमन करते हैं, सिर्फ वरुण ही मुझे नमन नही करता। नमन करने के लिए ही उन्हे बुलाया था।

पुत्रो ने कहा—वरुण भी बडे राजा हैं आपको सब के साथ एक ही तरीके से पेश नही आना चाहिए।

रावण—वरुण बडा राजा कैसे ? वह तो मेरे सारथी के समान है। मैं इतना शक्तिशाली हू कि उसे जरासी देर मे ही पराजित कर सकता हू।

पुत्रो ने कहा—आप वरुण को साधारण व्यक्ति समझते हैं, परन्तु एक ओर वरुण अपने हाथ मे शस्त्र ले और दूसरी ओर आप अपने हाथ मे शस्त्र ग्रहण करके लडे, तो ऐसा करने में आपका क्या बडपन रहा ?

रावण ने गर्व के साथ कहा—मेरे सामने वरुण की शक्ति की बिसात ही क्या है ? उसे पराजित करना मेरे बाये हाथ का काम है और मैं प्रतिज्ञा करता हू कि उसके सामने मैं शस्त्र नही उठाऊ गा। इतना ही नही, अगर उसने शस्त्र ग्रहण किया होगा तो मैं भी विना शस्त्र लडूंगा।

वरुणपुत्रो ने पिता से आकर कहा—पिताजी ! रावण मानता नही हैं। आप युद्ध करने के लिये तैयार रहिए। हमने उसे नि शस्त्र होकर लड़ने को वचनवद्ध कर लिया है। वह शस्त्र रहित होकर ही आपके साथ लडेगा।

रावण ने खरदूषण नामक सेनापति को वरुण के साथ युद्ध करने के लिए भेज दिया। खरदूषण रावण का वहनोई था। वरुण के पुत्रों ने खरदूपण के साथ युद्ध किया। रावण के वचन के अनुसार खरदूषण नि.शस्त्र था। अतएव वरुण के पुत्रो ने उसे पराजित कर दिया।

खरदूपण के पराजित होने के समाचार पाकर रावण सोचने लगा—अव क्या करना चाहिए ? मेरे पास कौन आया था जिसने मुझे युद्ध मे शस्त्रविहीन होकर लडने के लिए वचन वद्ध कर लिया है ? अव वरुण को किस भाति पराजित किया जाय ? मैंने युद्ध मे नि शस्त्र होकर लडने की प्रतिज्ञा करके भारी भूल कर डाली है।

रावण चिन्ता में पड गया। उसे चिन्तापुर देखकर एक मत्री ने कहा—आपने नि शस्त्र होकर लडने की जो प्रतिज्ञा की है वह आप और आपके भाइयो तक ही सीमित रखनी चाहिए। आपके अधीन दूसरे जो राजा हैं, उन्होने ऐसी कोई प्रतिज्ञा नही की है। आप किसी चतुर और पराक्रमी सामन्त को वरुण के साथ युद्ध करने के लिये सशस्त्र सेना के साथ भेजिए। प्रह्लाद जैसे चतुर सामन्त के रहते आपको चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है?

राजा रावण को सलाह पसन्द आ गई। उसने तुरन्त ही प्रह्लाद राजा के पास एक पत्र भेजकर कहलाया - वरुण को जीतने के लिए तुम्हारी आवश्यकता है। अत तैयार होकर वरुण के साथ युद्ध करने जाओ।

पत्र पढकर राजा प्रह्लाद ने विचार किया – इस समय स्वामी पर सकट आ पडा है। सकट के समय स्वामी की सेवा करना आवश्यक है। इस तरह विचार कर वह युद्ध की तैयारी करने लगे। पिता को युद्ध की तैयारी करते देख पवनकुमार ने अपने मित्र से पूछा पिताजी कहा जाने की तैयारी कर रहे हैं? मित्र ने सारी बात पवनकुमार को बतलाई। पवनकुमार ने कहा—वरुण के साथ युद्ध करना कोई निजी काम नही है, फिर पिताजी निष्कारण ही लडने क्यो जा रहे हैं?

पवनकुमार का मित्र बोला–स्वामी-सेवक का सम्बन्ध ऐसा ही होता है। इस सम्बन्ध के कारण पिताजी को सकट दूर करने के उद्देश्य से लडने जाना पडेगा।

पवनकुमार–अगर स्वामी-सेवक का सम्बन्ध ऐसा होता

प्राय वीर पिता का पुत्र वीर वनता है और कायर का पुत्र कायर होता है।

पवनकुमार रावण की तरफ से वरुण के साथ युद्ध करने जा रहे है, यह बात वायुवेग से नगर भर मे फैल गई। पवनकुमार जाने की तैयारी करने लगे। बसन्तमाला ने भी यह समाचार सुना। समाचार पाते ही वह अ जना के पास दौड़ी आई और कहने लगी—बहिन! तुमने सुना है या नही कि राजकुमार पिता के बदले स्वय वरुण के साथ युद्ध करने जा रहे है? युद्ध करना सरल काम नही है और निष्कारण अपने ऊपर युद्ध का भार ओढ लेना कोई बुद्धिमता भी नही है। पिताजी युद्ध के लिए जाते थे तो उन्हे जाने देना था। पर राजकुमार ने तो उन्हे जाने से रोककर स्वय जाना तय किया है मुझे तो यह काम ठीक नही जान पड़ता।

वसन्तमाला की बात के उत्तर मे अ जना चाहती तो कह सकती थी कि राजकुमार वास्तव मे बुद्धिहीन है लेकिन उसने अपने पति के सम्बन्ध मे कोई भी निन्दात्मक बात नही कही। कहा तो यही कहा कि राजकुमार जो कुछ कर रहे हैं वे क्षत्रियो के लिए उचित ही है क्षात्र धर्म के अनुकूल ही है पिता के बदले पुत्र का युद्ध मे जाना अनुचित कैसे कहा जा सकता है? भले ही राजकुतार मुझसे रुष्ट है, तथापि उनके उचित कार्य को मैं अनुचित नही कह सकती। मेरे ख्याल से राजकुमार ने पिता का भार अपने कधो पर लेकर ठीक ही किया है। पिता का भार हल्का करना सपूत का कर्त्तव्य है। राजकुमार अपने कर्त्तव्य का पालन करने के लिए ही युद्ध मे जा रहे हैं।

वसन्तमाला बोली—राजकुमार को अपने कर्त्तव्य का ज्ञान ही कहा है ? वह कर्त्तव्य पालन करना जानते होते तो क्या तुम्हारे प्रति अपना कर्त्तव्य पालते ?

अजना–सखी, तू भूलकर रही है । जो पिता के प्रति अपना कर्त्तव्य पालता है वह पत्नी के प्रति भी कर्त्तव्य का पालन कर सकेगा ! इससे विरुद्ध, जो पिता के प्रति कर्त्तव्य भ्रष्ट होगा, वह पत्नी के प्रति अपना कर्त्तव्य कैसे पा सकेगा?

यहा जरा इस बात पर विचार कीजिए कि आजकल की सामाजिक दशा कैसी है ? आज तो पत्नी के लिए पिता की अवहेलना की जाती है और पत्नी यह देख कर फूली नही समाती कि मेरे लिए पति अपने पिता की भी अवहेलना करते है । मगर ऐसे पति और पत्नी अन्त मे दु ख के ही भागी बनते हैं ।

अस्तु, अ जना के कथन के उत्तर मे बसन्तमाला कहने लगी—अगर आपकी दृष्टि मे राजकुमार का युद्ध के लिए जाना उचित है तो ठीक है । अब इस विषय मे मुझे कुछ भी नही कहना है । लेकिन सखी, एक बात की तरफ मै तुम्हारा ध्यान अवश्य खीचना चाहती हू, और वह यह है कि युद्ध करना कोई बच्चो का खेल नही है । युद्ध जीवन और मरण का खेल है । युद्ध मे जाने के बाद राजकुमार से आपका मिलाप होगा या नही, यह कौन कह सकता है ? इसलिए मेरी प्रार्थना है कि आप राजकुमार से मिलने के लिए एक पत्र उन्हे लिखिए ।

अजना–सखी, राजकुमार को पत्र लिखने की क्या आवश्यकता है । कौन ज़ाने, किस कारण वह मुझसे रुष्ठ

है ? हो सकता है कि उनके रोष का कारण मेरा क पाप ही हो । जब मेरे पाप कर्म का अन्त हो जायगा, त राजकुमार बिना ही किसी प्रयत्न के मुझे सेवा करने क अवसर देगे । इसके सिवाय, राजकुमार तो मेरे हृदय-मन्दिर मे विराजमान ही है । अगर साक्षात् मिलन न हो तो भी क्या हर्ज है ?

वसन्तमाला—बहिन, तुम ठीक कहती हो फिर भ राजकुमार को एक पत्र लिख दो तो हानि ही क्या है ? तुम अपने विचार जो मेरे सामने प्रकट करती रहती हो, वही विचार पत्र मे लिख डालो ।

इस प्रकार वसन्तमाला ने राजकुमार के नाम एक पत्र लिखने का अत्यन्त आग्रह किया । सखी के अनिवार्य आग्रह को मान कर अजना ने राजकुमार पवन के नाम एक पत्र लिखा । उस पत्र का आशय ऐसा था कि आप पिता के ऊपर आ पडे बोझे को कन्धो पर लेकर युद्ध करने जा रहे है, यह समाचार जानकर मुझे प्रसन्नता हुई है । मेरे लिए यह गौरव की बात है कि आप अपने कर्त्तव्य का पालन करने जा रहे हैं । मैं आपके चरणो मे क्रमश प्रणाम करती हू और यह प्रार्थना भी कि आप मुझे भूल न जाए ।

अजना ने सरल भाव से यह पत्र लिखा और वसन्तमाला के हवाले कर दिया । वसन्तमाला पत्र लेकर जव पवनकुमार के पास गई तो वह युद्ध की तैयारी मे लगे थे । उसने पवनकुमार के हाथ मे पत्र रख दिया । पवनकुमार ने पत्र ले लिया और लेते ही पूछा—मैं इस समय काम ; उलझा हू । ऐसे मौके पर तू किसका पत्र लेकर आई है ?"

इतना कहकर पवन ने पत्र पढने के लिए उस पर निगाह डाली । पत्र के नीचे अजना का नाम देखकर वह लाल-पीला हो उठा । उसने तुरन्त ही पत्र को फाड कर फेंक दिया। लाल-लाल आंखें निकाल कर उसने बसन्तमाला से कहा— ले, अपना पत्र वापिस ले जा । मैं जिसका नाम भी सुनना नही चाहता, उसका पत्र इस समय पढने की मुझे फुर्सत नही है । अजना के पत्र की यह दशा देखकर और पवनकुमार की निष्ठुर बात सुनकर बसन्तमाला रोती-रोती अजेना के पास आई । वसन्तमाला आखिर तो दासी ही ठहरी ! उसने अजना के सामने पवनकुमार के विरुद्ध वहुत कुछ कह डाला । मगर अजना वडे धीरज के साथ सभी कुछ सुनती रही । उसने उत्तर मे केवल इतना कहा— राजकुमार ने पत्र फाड डाला तो कौन वडी बात हो गई ? जब वह मेरे हृदय मे बसे हुए ही हैं तो वास्तव मे उन्हे पत्र लिखने की आवश्यकता ही नही थी । लेकिन तू मानी ही नही । तेरे आग्रह के कारण मैंने पत्र लिख दिया था । मगर इससे यह बात तो साफ मालूम हो गई कि राजकुमार सत्यप्रिय हैं । उन्होने दिल मे किसी भी प्रकार का कपट न कर अपनी सत्यप्रियता का परिचय किया है । मेरे लिए यह कम आनन्द की बात नही है ।

अजना की बात सुनकर ताना मारती हुई बसन्तमाला बोली —ऐसे ही होते हैं सत्यप्रेमी ! सत्य के प्रेमी क्या किसी को इस प्रकार कष्ट दे सकते हैं ।

अजना—यह तो मेरी परीक्षा हो रही है । जैसे मेघ चातक की परीक्षा करने के लिए गर्जना करता है, उसी

प्रकार राजकुमार मेरी प्रतीक्षा कर रहे है। परीक्षा के सम
ववरा उठने और दुख मानने की क्या आवश्यकता है
मेरे लिए सन्तोष की बात यही है कि मेरे पतिदेव सत्यप्रेमी
हैं। मैंने पत्र मे अपने भाव प्रकट कर दिये थे। और पत्र
फाड़कर उन्होने अपने भाव प्रकट कर दिये हैं। इसमे दुख
मानने की तनिक भी गुंजाइश नही है। जव चातक जैसा
पक्षी भी परीक्षा के समय दुख नही मानता, तो फिर मैं
क्यो दुख मानू ?

इधर अंजना वसन्तमाला को समभा-बुभा कर शात कर रही थी कि उसी समय पवनकुमार के युद्ध–प्रस्थान की घोपणा करने वाले बाजे बजने लगे। जैसे ही अंजना को मालूम हुआ कि राजकुमार युद्ध के लिए प्रस्थान कर रहे हैं, उसने वसन्तमाला से कहा – पतिदेव युद्ध के लिए रवाना हो रहे है। इस समय उनके दर्शन कर लेना चाहिए और उन्हे शुभ शकुन भी वताना चाहिए।

मगर बसन्तमाला के दिल मे पत्र का अपमान करना तो काटे की तरह चुभ रहा था। उसने फिर वही बात दोहराई और दर्शन करने के लिए जाने का विरोध किया। फिर भी अंजना ने उसकी वात अनसुनी कर दी और दर्शनार्थ जाने तथा शुभ शकुन दिखलाने का अपना पक्का इरादा रखा।

अंजना सुन्दर वस्त्र पहनकर और हाथ मे दही का कटोरा लेकर ऐसी जगह खडी हो गई, जहा से पवनकुमार निकलने वाले थे। पवनकुमार ने देखा—कोई स्त्री शुभ शकुन दिखाने के लिये खडी है। पर जव वह नजदीक आये और उन्होने जाना कि यह अंजना है तो उनके क्रोध का पार न

रहा । क्रोध के आवेश में मनुष्य कौनसा–जघन्य काम नहीं कर बैठता ? पवनकुमार ने दही के कटोरे मे एक लात जमाई । दही जमीन पर जा गिरा । इस प्रकार अजना का तिरस्कार करके पवनकुमार आगे बढा ।

तिरस्कृत अजना भावनाओं के तूफान मे उडती-उडती अपने महल मे आ गई । उसने बसन्तमाला से कहा बहिन ! मेरे पाप-कर्मो का उदय आया है । मैं किसी भी उपाय से अपने पति को सन्तुष्ट नही कर सकती । अब मेरे लिये एक ही उपाय शेष है और वह है अनशन व्रत धारण करना । ऐसे पापकर्मों के फल से छुटकारा पाने का दूसरा कोई भी उपाय मेरी समझ मे नही आता ! इसलिए अनशन व्रत धारण करके मैं अपनी आत्मा की शुद्धि करना चाहती हू । मैंने यह निश्चय कर लिया है ।

बसन्तमाला बोली—सखी, युद्ध मैं जाते समय तो शत्रु के साथ भी अच्छा व्यवहार किया जाता है । मगर तुम तो शुद्ध शकुन बताने गई और राजकुमार ने तुम्हारा उलटा अपमान किया । यह शकुन का अपमान नही है और न तुम्हारा ही । मेरी समझ मे तो राजकुमार ने अपना ही अपशकुन किया है ।

बसन्तमाला की बात के उत्तर मे अजना कह सकती थी—वास्तव मे तेरा कहना सही है । जिन्होने मेरा अपमान किया है, उसका भला कैसे हो सकता है ? मगर अजना ने ऐसा कुछ भी न कहते हुए सिर्फ यही कहा—सखी, इस तरह पति के अहित की बात न कह । मेरा रोम-रोम सदा-सर्वदा उनका हित ही चाहता है । उन्होने जो अपमान किया है

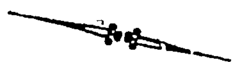
वह मेरा नही वरन् कर्म का अपमान किया है। कर्म का अन्त धैर्य धारण करने से ही हो सकता है, दूसरे का अहित चाहने से नही। इसलिए मैं हृदय से यही चाहती हूं कि पतिदेव विजयी हो, उनका कल्याण हो और मेरा दिखलाया हुआ शुभ शकुन सफल हो।

अजना की बात वसन्तमाला को नही रुचि। वह जरा तेजी से कहने लगी—जिसने तुम्हारा घोर अपमान किया है उसका कल्याण चाहने से लाभ ही क्या है ?

अ जना—दूसरे का कल्याण चाहने मे, तुझे चाहे कोई भी लाभ दिखाई न देता हो पर मै तो अनेक लाभ देखती हू। मेरे धर्म गुरु ने मुझे समझाया है कि अपमानजनक स्थिति सहन करके भी दूसरे का भला चाहने मे हानि नही वल्कि लाभ ही लाभ है। अपनी आत्मा, काम क्रोध आदि औदयिक भावो मे किसी भी स्थिति के कारण न पहुंच पाये तो आत्मा का लाभ ही है। जब पति स्थूल युद्ध करने गये हैं तो मेरे लिए यही उचित होगा कि मैं यहां सूक्ष्म युद्ध करू अर्थात्-काम, क्रोध आदि शत्रुओ के साथ घमासान करू।

वसन्तमाला अजना की वात से कुछ प्रभावित हुई। फिर भी वह कहने लगी—सखी, तुम्हारी बाये तो वडी अनोखी हैं।

अ जना—यह भी अच्छा ही हुआ कि अशुभ मे से भी तेरे लिए कुछ शुभ परिणाम निकला। जो वात तू अभी तक नही समझती थी, अव समझ गई।



७ : पुर्नमिलन

इधर अजना जब बसन्तमाला से पति का हित चाहने के विषय मे वार्तालाप कर रही थी तब पवनकुमार मान-सरोवर पर पडाव डालकर अपने तम्बू मे सो रहे थे। रात्रि का समय था। पवनकुमार निद्रा के अधीन हो चुके। अचानक एक चकवी का करुण विलाप उनके कानो मे पडा। पवनकुमार की निद्रा भग हो गई। उन्होने आखे खोलकर देखा। मालूम हुआ, किसी ने चकवा को सताया है और इसी कारण चकवी इतना करुण क्रन्दन कर रही है। चकवी का यह दिल हिला देने वाला करुण क्रन्दन सुनकर पवन-कुमार विचारने लगे—मैं समझता था कि स्त्री जाति मे निष्ठुरता ही होती है। परन्तु देखता हू कि पक्षियो की स्त्री जाति मे भी पुरुष के प्रति जब ऐसा प्रेम है तो फिर विवेकशील मानव समाज की स्त्री जाति मे पुरुषो के प्रति कितना प्रेम होगा ? इस विषय मे अपने मित्रो के साथ विचार-विनिमय करना ठीक होगा।

पवनकुमार ने अपने मित्र प्रहस्त को बुलाया। प्रहस्त के आने पर पवनकुमार कहने लगा—भई! मेरी नीद उचट गई है। आज हृदय मे न जाने किस प्रकार का विचार-मन्थन हो रहा है!

प्रहस्त—आपने बडा अनुचित कार्य किया है। ऐसी स्थिति मे नीद आ भी कैसे सकती है ?

पवन०—ऐसा कौनसा अनुचित काम मैंने कर डाला है कि नीद ही मेरे लिए हराम हो जाए।

प्रहस्त - वह सती आपको शुकुन बताने आई और आपने विना कारण ही उसका तिरस्कार कर दिया, यह क्या कोई अच्छा काम है ? उसी समय मेरे दिल को सख्त चोट पहुची थी । पर कहू तो किस से कहू ? आज कहने का अवसर मिला है तो कह रहा हू ।

पवनकुमार—क्या तुम्हे नही मालूम है कि स्त्रिया कितनी क्रूर होती है ?

प्रहस्त—पुरुष भी क्रूर होते हैं । आप जैसे समझदार और उच्च श्रेणी के लोग भी अपने पौरुष का क्या दुरुपयोग नही करते ? आपके प्रति अ जना देवी का कितना प्रेम है? इसी प्रेम के कारण वह आपके घर मे पडी है और तिरस्कार तथा कष्ट भोग रही है । क्या वह अपने पिता के घर नही जा सकती थी ? आपकी तो उनके प्रति सद्भावना तक नही है और वह आपके प्रति प्रेम-भाव रखती है । वह अपना प्रेम प्रदर्शित करने के लिए आपको शुभ शकुन दिखाने आई और आपने उनका घोर तिरस्कार किया । क्या वह क्रूरता नही है?

पवन०—तुम्हारा कहना सही है । मगर मिश्रकेशी दासो अंजना के सामने परपुरुष की प्रशसा कर रही थी और अ जना उसे चुपचाप सुन रही थी, तव क्या तुम मेरे साथ नही थे ।

प्रहस्त—वस, इस मामूली सी वात के लिये ही आप अंजना जैसी सती पर रुष्ट हैं ? अ जना धर्म को पहचानती है । जव उसने विद्युत्प्रभ के विषय मे यह सुन रखा था कि वह अठारह वर्ष की उम्र मे दीक्षा लेगे और छब्बीस वर्ष

की उम्र मे मोक्ष पधार जायेगे, तो अंजना जैसी धर्मशीला उन-चर्म शरीरी की प्रशशा के विरोध मे क्या कह सकती थी ? अगर हृदय में आपके प्रति कोई दुर्भावना हो तो क्या वह इतने दिनो तक आपके यहा रहकर विपत्ति झेलती रहती ? वह अपने पिता के घर नही चली जाती ? इसके अतिरिक्त घर पर आये व्यक्ति का सम्मान करना चाहिए या अपमान करना चाहिए ? आपकी बातो से तो यही पता चलता है कि आपको अजना के विषय मे भ्रम हो गया है। वास्तव मे वह सती नारी है। उनके हृदय मे आपके प्रति असीम प्रेम है।

प्रहस्त की युक्तियुक्त बात सुनकर पवनकुमार गहरे विचार मे डूब गया। उनके विचार क्षेत्र-की कुछ-कुछ शुद्धि तो हो ही चुकी थी। अब प्रहस्त की बातो से उसका हृदय अधिक साफ हो गया। हृदय की कठोरता सरसता एवं कोमलता के रूप मे परिणत हो गई। चकवी की घटना के विषय मे वह सरस भाव से सोचने लगे—चकवा, चकवी को कुछ देता नहीं हैं। फिर भी चकवी के हृदय में उसके प्रति ऐसा प्रेम है कि चकवा के दुख से दुखी हो रही है। और करुण विलाप कर रही है। अजना के हृदय में अगर मेरे प्रति प्रेम होगा तो वह भी इसी भांति दु.खी हो रही होगी। अभी तक तो वह भावी सुख की आशा से जीवित रही और जैसे-तैसे करके दुख के दिन काटती रही है। लेकिन आते समय मैंने उसका जो तिरस्कार कर दिया है, उस तिरस्कार के बाद वह किस आशा पर जीवित रह सकेगी ? लेकिन अब मुझे करना क्या चाहिए ! अगर लौटकर अजना के पास जाता हू तो पिताजी और दूसरे लोग कहेगे कि

जो स्त्री मोह मे पडी है वह युद्ध मे जाकर क्या खाक विजय प्राप्त करेगा ? अगर नही जाता हूं तो मुझे भय है कि दुःखो से ऊब कर अंजना कही अपने प्राण न खो बैठे। इस दुविधा मे मैं क्या करूं ?

आखिर पवनकुमार ने अपनी दुविधा प्रहस्त के सामने रख दी। प्रहस्त ने विचार कर कहा इस विषय मे आप तनिक भी चिन्ता न करें। इस समय हमारे सामने दो मुख्य कार्य हैं। इन दोनो मे से किसी एक का त्याग करना पड़ेगा।

परिच्छेदो हि पाण्डित्यं यदापन्ना विपत्तयः'
अपरिच्छेदकर्तृणां विपदः स्युः पदे पदे।

—हितोपदेश

ऐसे दुविधा के अवसर पर मनुष्य को विवेक से—समझ से काम लेना चाहिए। जो विवेक से काम नही लेता, उसे पद–पद पर सकटो का सामना करना पड़ता है।

पवनकुमार बोले—अच्छी बात है। इसके निर्णय का भार मैं तुम्हारे ऊपर ही छोड़ता हूं। बताओ, इस स्थिति मे क्या करना चाहिए ?

प्रहस्त—हमलोग रातो-रात जाकर लौट सकते हैं। किसी को पता ही नही लगेगा कि आप कहा गये हैं। सुबह होते-होते तो यहा आ पहुचेगे। आपके मिलने से अ जना देवी को सन्तोप भी होगा और न वदनामी होगी, न युद्ध-कार्य गडवड मे पड़ेगा।

पवन०–रात ही रात मे जाकर किस प्रकार लौट सकेंगे ?

प्रहस्त—हम लोग विद्या जानते हैं। विमान का साधन भी अपने पास है। विमान विद्या अथवा ऊपर उड़ने

की कला दूसरों का सहार करने के लिए नही है। कठिनाई के समय ही उसका सदुपयोग होता है।

आज लोग हवाई जहाज देखकर आश्चर्य करते हैं। किन्तु प्राचीन काल मे भी आर्यावर्त्त मे विमान चलते थे, यह बात इस कथन से तथा अन्य कथाओ से भी स्पष्ट मालूम हो जाती है। पहले विमान न होते तो कथाओं मे उनका उल्लेख कैसे आ सकता था? आज दिखाई देने वाले विमानो का तो अभी-अभी आविष्कार हुआ है, परन्तु कथाओ में आकाशगामी विमानो की बात तो बहुत पहले ही लिखी जा चुकी है।

पुरानी स्मृतिया पवनकुमार के अन्त करण मे जाग उठी। वह सोचने लगा—यही वह सरोवर है, जहा मेरा विवाह-सस्कार हुआ था। और आज, इतने वर्षों के वाद, इसी सरोवर पर यह चकवी मानो कोई अस्फुट सन्देश मुझे सुना रही है। उस दिन का विवाह तो नाम मात्र को ही था, असली विवाह तो मेरा आज हो रहा है। दैव की गति कितनी अनोखी है?

पवनकुमार ने अजना के पास जाने का पक्का सकल्प कर लिया। चकवी इस सकल्प में निमित्त कारण बनी मानो चकवी के रूप मे कोई अदृश्य शक्ति ही पवनकुमार को अजना के प्रति आकर्षित कर रही थी। अदृश्य शक्ति अपना प्रभाव किस प्रकार डालती है, यह दिखाई नही देता, फिर भी वह बडी प्रबलता के साथ आप अपना कार्य करती रहती है। अदृश्य शक्ति किस तरह कार्य करती है, यह बताने के लिये यहा एक प्रासगिक घटना बतलाई जाती है—

गए। दोनो एक सघन पेड के नीचे जा खडे हुए। वर्षा होते देख मजदूर कहने लगा लोग परमात्मा-परमात्मा चिल्लाते हैं पर परमात्मा है कहा ? अगर सचमुच परमात्मा होता तो हम जैसे गरीबो के ऊपर दया न करता। देखो न, मेरे सारे कपडे पानी से तरबतर हो गए हैं और दूसरे कपडे मेरे पास नही है।

मजदूर की बात सुनकर पठान ने कहा—तुम यही समझ लो कि खुदा ने तुम्हारे ऊपर बडी मेहरबानी की है।

मजदूर पानी बरसने मे मेरे ऊपर खुदा की क्या मेहरबानी हुई ?

पठान—देख, यह बन्दूक मैं इसलिये लाया था कि रास्ते मे तुम्हे इससे ठिकाने लगा दूगा और तुम्हारे पास जो रुपये है, छीन लूगा। मगर कुदरत को तुम्हारी मौत मन्जूर नही थी। मूसलाधार पानी बरसा और बन्दूक मे डाला बारुद गीला हो गया। अब यह बन्दूक बेकार है। इस प्रकार तू कुदरत की मेहरबानी से बच सका है। पानी न बरसा होता तो आज तुम इस बन्दूक के शिकार हो गये होते और तुम्हारे पास के रुपये मेरे कब्जे मे होते। तुम चाहो तो मुझसे बदला ले सकते हो। मगर सच्ची बात मैंने तुम्हे बता दी।

मजदूर, पठान की बात सुनकर प्रसन्न हुआ। उसे ऐसा लगा, मानो उसने नया जीवन पा लिया हो। वह अपने प्राणो की रक्षा के लिये परमात्मा को धन्यवाद देने

लगा। वह सोचने लगा—मैं बाहर ही बाहर देख रहा था, पर कौन जानता है कि भीतर ही भीतर कुदरत की करामात कैसी है ? दरअसल दु:ख का कारण अज्ञान है। अज्ञान के कारण ही मजदूर वर्षा और परमात्मा को कोस रहा था।

कहने का आशय यह है कि लोग तात्कालिक कष्ट से घबरा जाते है और धैर्य छोड़ बैठते हैं। वे यह नही सोचते कि इस कष्ट के पीछे अदृश्य शक्ति क्या काम कर रही है ? ज्ञानी जनो का कथन है कि अदृश्य शक्ति पर भरोसा रखो। जैसे तुम्हे शक्कर की मिठास पर अटल विश्वास है, तुम भलीभाति और निश्चित रूप से मानते हो कि शक्कर मीठी ही होती है—कटुक नही हो सकती। इसी प्रकार ज्ञानीजनो के कथन पर भी अटल श्रद्धा रखो। कुछ लोग ऐसे हैं जो साधारण लोगो की बात पर तो विश्वास कर लेते है, मगर "प्राण जाए पर वचन न जाई" इस प्रकार की दृढ प्रतिज्ञा वाले महात्माओ की बात पर विश्वास नही करते। यह एक गम्भीर भूल है। महात्माओ का बताया मार्ग सदा कल्याणकारी ही होता है। उनके बताए मार्ग पर चलने मे कभी अविश्वास मत करो। एक मनुष्य ने पूज्य श्रीलाल जी महाराज से कहा—"महाराज! जैनो की अहिसा ने भारत को बडी हानि पहुचाई है। इस अहिसा ने देश को कायर बना दिया है।" पूज्यश्री ने इस आरोप के उत्तर मे कहा—मालूम होता है आपने अहिसा और सत्य का आचरण ही नही किया है और इसी कारण आप ऐसा कहते हैं। अहिसा और सत्य का आचरण करने वाला तो वीर ही होगा। कायर इनका आचरण नही कर सकता। कायर मे इतना सामर्थ्य ही नही होता कि अहिसा और

सत्य के आचरण मैं दृढ रह सके । इसलिए अहिसा–धर्म वीरो का धर्म कहलाता है । जिन्होंने अहिसा और सत्य का अभ्यास किया है और जिन्हे उन पर दृढ विश्वास हो गया है, वे अपने शरीर पर भी ममता नही रखते ।

तुम भी इस प्रकार की वीरता धारण करो और तुमने जो सत्य धर्म स्वीकार किया है उस पर विश्वास रक्खो । ऐसा करने से तुम्हारा कल्याण होगा ।

सती अजना के हृदय मे धर्म के प्रति दृढ विश्वास था । इस विश्वास के प्रताप से कष्ट के समय अदृश्य शक्ति उसे धीरज बधाती थी । बाईस वर्ष तक ब्रह्मचर्य का विश्वास होने के कारण ही सती के जीवन मे उत्पन्न हो पूर्ण रूप से पालन करने की शक्ति भी धर्म के प्रति दृढ चुकी थी । ससार मे धर्म की शक्ति अपूर्व और अजेय है । धर्म की शक्ति मे भी अद्भुत आकर्षण शक्ति होती है । पवनकुमार को अजना के प्रति आकर्षित करने मे भी धर्म की अदृश्य शक्ति काम कर रही थी ।

अन्तत पवनकुमार ने विमान मे बैठकर अजना के महल मे जाने का निश्चय किया । इस निश्चय के अनुसार दोनो विमान मे बैठकर अजना से महल मे आ पहुचे ।

प्रहस्त ने पवनकुमार से कहा—जरा खडे रहो और देखो कि यहा क्या बाते हो रही है ? चुपचाप सुनो । स्त्रियो के भाव उनकी एकान्त मे होने वाली बातचीत से मालूम हो सकते हैं । अभी आप मेरे कहने से यहा आये हैं, मगर मेरी बात पर विश्वास मत कीजिये । यहा की बातचीत सुनकर

अ जना देवी के भाव जान लीजिये। उसके बाद वह आपको अपनाने योग्य जान पड़े तो अपना लेना, अन्यथा न अपनाना। पर आप स्वय परीक्षा करले, यह अच्छा होगा। परीक्षा और विश्वास के बाद जो प्रेम किया जाता है, वही प्रेम स्थायी होता है।

पवनकुमार को प्रहस्त की बात उचित मालूम पडी। वह दरवाजे पर खडे होकर अ जना और वसन्तमाला की बातचीत सुनने लगे।

वसन्तमाला अ जना से कुछ कह रही थी-सखी, राजकुमार ने तुम्हारा कैसा घोर अपमान किया है? उनसे अब और क्या आशा की जा सकती?

अ जना ने कहा—सखी मुझे पति के काम की ओर ध्यान नही देना चाहिए वरन् धर्म का पालन करने का ही ध्यान रखना चाहिए। मेरे गुरु ने धर्म आ स्वरूप इस प्रकार सिखाया है—

नो इहलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा नो परलोगट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जा, नो कित्तीवण्णसद्दसिलोगतट्ठयाए तवमहिट्ठिज्जानन्नत्थ निज्जरट्ठायाए तवमहिट्ठिज्जा।

अर्थात् - इस लोक, परलोक सम्बन्धी लाभ की इच्छा से अथवा कीर्ति आदि की आशा से तप नही करना चाहिए। निष्काम से सेवल निर्जरा के लिये ही तपश्चरण करना चाहिए। गुरुदेव का यह आदेश है। इस आदेश के अनुसार ही मुझे निष्काम भाव से धर्म का पालन करना है।

वसन्तमाला ने पूछा—धर्म का कैसे पालन करोगी?

अ जना ने कहा—

सत्यव्रत धार मन मोह ते निवार कर,
गिरि की गुहा मे तन तप मे तपावेंगे ।
दया दिल लावेंगे जीव न सतावेंगे,
रीत न दबावेंगे न काया कलपावेगे ।
माणिक की जोति इस जोति मे जुटावेंगे,
और आनन्द बढ़ावेंगे अनन्त सुख पावेंगे ।
दुनियां मे फेरि कभी आवेंगे न जावेंगे,
कर्म को खपावेंगे अमर पद पावेंगे ।

यह एक कवि की कविता है। इस कविता मे जो कल्पना की गई है, मानो वह अ जना के भावो को ही व्यक्त कर रही है।

अ जना बसन्तमाला से कहती है सखी, मेरे गुरु ने बतलाया है कि आत्मा को शुद्ध रखने से दु ख भी सुख के रूप मे परिणित हो जाता है और फिर किसी भी प्रकार का कष्ट शेष नही रहता। इसलिये मैं गुरु की आज्ञा के अनुसार आत्मा को शुद्ध करने का प्रयत्न करू गी। आत्मा को शुद्ध करने के लिए मै सबसे पहिले सत्यव्रत को अ गीकार करूंगा। मेरे लिये तो पतिव्रत धर्म को स्वीकार करना ही सत्यव्रत को स्वीकार करने के बराबर है।

पुरुष चाहते हैं कि स्त्रियां पतिव्रत धर्म का पालन करे, परन्तु उन्हे क्या पत्नीव्रत का पालन नही करना चाहिए? पतिव्रत पत्नी के लिये और पत्नीव्रत पति के लिये कल्याणकारी है। पतिव्रत का माहात्म्य कितना और कैसा है, यह बतलाने के लिये अनेक उदाहरण मौजूद हैं। पति-

व्रत के प्रभाव से सीता के लिगे अग्नि भी ठण्डी हो गयी थी। सीता ने पतिव्रधर्म का पालन करने के लिये कितने अधिक कष्ट सहन किये थे ? वह चाहती तो राम और कौशल्या का आग्रह मानकर घर मे बैठी रह सकती थी और कष्टो से बच सकती थी। मगर पतिव्रत धर्म का पालन करने के लिये उसने कष्ट सहना ही स्वीकार किया। इसी प्रकार पुरुषो को भी स्त्रियो के सुख-दुःख के भागीदार बनना चाहिये और स्त्रियो की ही तरह एक पत्नीव्रत का पालन करना चाहिये। स्त्रियो के लिये जैसे पतिव्रत धर्म है उसी प्रकार पुरुषो के लिये पत्नीव्रत ही धर्म है।

अंजना ने वसन्तमामा से कहा—पति ने मेरा अपमान किया है, इसलिये मुझे अपने मन मे दुर्भाव लाना चाहिये यह उचित नही है। अपमान का बदला अपमान से नही किन्तु प्रेम से लेना चाहिये। दूसरे के हृदय को जीतने का यही सरल मार्ग है। मैं अपमान का बदला प्रेम से लूंगी। प्रेम ही किसी के हृदय पर विजय प्राप्त करने का सबल साधन है। मैं मोह-वासना को जीतकर जंगल मे, पर्वत की गुफा मे जाकर अहिंसापूर्वक तप का आचरण करूंगी और इस तरीके से कर्मों का नाश करूंगी। पतिदेव ने रुष्ट होकर मुझे अपने जीवन का सुधार करने का अवकाश दिया है। उन्होने सचमुच मेरा उपकार किया है।

अंजना का वह सब कथन सुनकर पवनकुमार बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे—अंजना की भावना कितनी विशुद्ध और दृढ है !

प्रहस्त ने हास्य के साथ कहा अब तो विश्वास हो गया ?

फिर प्रहस्त ने आवाज देकर कहा—द्वार खोलिये ।

पुरुष की आवाज सुनकर अंजना कहने लगी—कौन है यह दुष्ट जो रात्रि के समय यहा आया है और द्वार खोलने के लिये कहता है ? जान पड़ता है, राजकुमार की अनुपस्थिति मे, हमे असहाय समझकर कोई आया है ! लेकिन न हम असहाय हैं और न अवला ही । सुबह होते ही श्वसुर से कहकर इसकी अक्ल ठिकाने लाऊंगी ।

यद्यपि अजना के शब्द कठोर और अप्रिय थे, फिर भी पवनकुमार को वह बडे ही प्रिय लगे ।

प्रहस्त ने धीरे से कहा—आप जरा भी सन्देह मत कीजिये । हम कोई पराये नही है । राजकुमार पवन के साथ मैं उनका मित्र प्रहस्त हू ।

अ जना बोली—ठीक कहते होगे, पर खातिरी किये बिना द्वार नही खोल सकती । इतना कहकर अंजना ने एक छोटी-सी खिडकी से देखा तो पतिदेव उपस्थित थे ।

इस प्रकार अंजना को खातिरी हो गई कि द्वार खटखटाने वाले पतिदेव और उनके मित्र प्रहस्त ही हैं तो उसने द्वार खोल दिया । पवनकुमार ने भीतर प्रवेश किया । अ जना ने यथोचित नमन करके कहा—आज आपने मेरे ऊपर बड़ी कृपा की है । मुझ जैसी अभागिन और आप जैसा दयालु और कौन होगा ? मैं बड़ी अपराधिन हू । मेरा अपराध क्षमा कीजिये ।

वास्तव मे अंजना ने कोई अपराध नही किया था । अपराध तो पवनकुमार का ही था । फिर भी अ जना अपना

ही अपराध मान रही है और उसके लिये क्षमायाचना भी कर रही है। यह उन लोगो के लिये जीवित सबक है जो दूसरो का अपराध देखते हैं। वास्तव मे दूसरे के बदले अगर अपना अपराध माना जाय तो किसी भी प्रकार का झगडा ही न रहे।

अंजना अपराध मानकर पवनकुमार से क्षमा मांगने लगी। पवनकुमार अजना की यह नम्रता देखकर प्रसन्न हुए। उन्होने कहा—अपराध तुम्हारा है या हमारा ?

अजना—मेरी माता ने मुझे अपना ही अपराध मानने की शिक्षा दी है। उन्होने पतिदेव की सेवा का यही मन्त्र मुझे सिखलाया है।

आजकल के लोग दूसरो को वश मे रखने को मन्त्र-तन्त्र सीखने के लिये तैयार रहते है। वे स्वय दूसरे के वश मे होकर उसको अपने वश मे करने का मत्र नही सीखते। अगर हम दूसरे को वश मे करना चाहते हैं तो सरल उपाय यही है कि हम स्वय दूसरे के वश मे रहना सीखें।

अजना कहती है—मेरी माता ने पति को वश मे करने की दूसरी शिक्षा इस प्रकार दी है—

सानुकूल्यस्य संकल्पः प्रातिकूल्यस्य वर्जनम्।
रक्षिण्यतीति विश्वासो गोप्तृत्वं वरण तथा॥
आत्मनिक्षेपःकार्पण्य षड्विधा शरणागताः।

आशय यह है—अगर तू पति के शरण मे रहना चाहती है और पति को अपने अधीन रखना चाहती है तो तुझे जीवन मे छ बातो का अमल करना चाहिये। सर्व

प्रथम पति को जो अनुकूल हो वह करने का संकल्प करना और जो प्रतिकूल हो उसको त्याग देना। पति को आत्म-समर्पण करना, पति की रक्षा करना, पति की गोपनीय बात को गुप्त रखना और पति के समक्ष दीनता रखना। इन छः बातो पर अमल करने से पति को ही नही, परमात्मा को भी वश मे किया जा सकता है। यह बात मेरी माता ने मुझे सिखाई है।

परमेश्वर को किस प्रकार वश मे किया जाय और किस प्रकार परमेश्वर की शरण मे रहना चाहिये, इस सम्बन्ध मे भक्त जन पतिव्रता स्त्री का ही उदाहरण दिया करते है। इसलिये स्त्रियो को इन उपायो द्वारा अपने पति की शरण मे जाना चाहिये अथवा पति को अपने अधीन बनाना चाहिये। विवाह के समय वर और वधू एक सकल्प करते हैं, जिसके अनुसार वर के लिये शेष समस्त स्त्रिया माता और वहिन के समान हैं तथा वधू के लिये शेष पुरुष पिता और भाई के समान हैं। इस प्रकार का सकल्प आज भी किया जाता है पर उसका पालन वरावर नही होता दीखता। आज तो पवित्र सकल्प करना एक रूढि हो गई है।

अजना कहती है—जब आप मुझे दर्शन नही देते थे तव भी मैं यही सोचती थी कि जैसे मैंने सकल्प किया है उसी प्रकार आपने भी सकल्प किया है। विवाह के समय किए हुए पवित्र सकल्प का भलीभाति पालन करना पति और पत्नी दोनो का कर्त्तव्य है। मेरा यह साधारण कर्त्तव्य है कि जो आपको अनुकूल हो, वही करू और जो प्रतिकूल

हो, वह काम न करूं। अगर आपके मायके जाने के लिये कहा होता तो मैं वहां जा सकती थी। मगर जब आपने इस विषय में कुछ भी नही कहा तो मैं कैसे जाती ? जिस खिडकी के द्वारा मैं आपका दर्शन करती थी, वह भी आपने जब बन्द करवादी तो मैंने यही सोचा कि पतिदेव मेरे हृदय मे ही विराजते हैं तो फिर दर्शन करने की आवश्यकता ही क्या है ? आपने जो किया ठीक ही किया है। मेरे विचार में तो वही सच्चा पति है जो पावन अर्थात् पवित्र बनाता है। मुझे विश्वास है कि आप ही मेरी रक्षा करेंगे। भले ही आप मेरे शरीर का तिरस्कार करें मगर धर्म की रक्षा तो आप करेंगे ही, यह मुझे विश्वास है। इसी विश्वास के बल पर मैं आज तक जीवित रही हू और इसी विश्वास के प्रभाव से मुझे आपका दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त हो सका है।

अंजना ने सकट के समय धर्म की रक्षा की तो आखिर उसकी भी रक्षा हुई। जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है। कहा है—

धर्म एव हतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः।

अर्थात्—जो धर्म का नाश करता है, धर्म उसका नाश करता है और जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता है।

इस प्रकार विश्वास रख कर धर्म का पालन करने से अवश्य ही कल्याण होता है। धर्म कल्याण-मन्दिर की पहली सीढी है।

अजना ने फिर कहा—मेरी माता ने मुझे नम्र रहने

का भी मन्त्र सिखलाया है। दूसरे के हृदय को जीतने की चाबी नम्रता ही है। स्त्री का धर्म है कि वह पति के सामने नम्र रहे और पर-पुरुष के सामने कठोर। आप प्रत्यक्ष ही देख चुके हैं कि मैं आपके सामने कितनी नम्र और दूसरे के समक्ष कितनी कठोर हू।

अजना की माता ने पति को वश मे करने और पति के शरण मे जाने के जो उपाय बतलाये हैं परमात्मा को वश मे करने और परमात्मा के शरण मे जाने के भी वही उपाय है। अगर तुम परमात्मा के शरण जाना चाहते हो तो इन उपायो पर ध्यान दो और जो व्यवहार तुम्हे अपने लिए प्रिय नही है, वह तुम दूसरो के साथ मत करो। तुम्हे अपने विषय मे हिसा, असत्य, चोरी आदि प्रिय नही लगते हैं तो दूसरो के प्रति भी इनका व्यवहार मत करो। इसके अतिरिक्त हमे जिसकी शरण मे जाना है उसके प्रति विनम्र होकर रहना चाहिये। किसी भी मनुष्य को न अधिक कठोर बनकर रहना चाहिए और न अधिक विनम्र होकर ही, बल्कि बीकानेरी मिश्री के समान रहना चाहिये। बीकानेरी मिश्री, अगर मुह मे रखी जाय तो गल कर सुन्दर मिठास देती है। अगर दूसरे को मारने के काम मे लाई जाय तो पत्थर की तरह सख्त आघात भी पहुचाती है। इसी प्रकार धर्म के प्रति नम्रता और पाप के प्रति कठोरता रखने वाला ही धर्म का भलीभाति पालन कर सकता है और पाप से बच सकता है। पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज कहते थे कि धर्म और धन दोनो रहे तो बात दूसरी अगर दोनो मे से एक का त्याग करके दूसरे की रक्षा करना अनिवार्य हो जाय तो धन का बलिदान करके भी धर्म की रक्षा करनी

चाहिये । लेकिन लोग धन के लिए धर्म को हार जाते हैं। नतीजा यह होता है कि धन भी चला जाता है और धर्म भी नही रहता ।

अ जना की वाते सुनकर पवनकुमार उसकी प्रशंसा करता हुआ कहने लगा– प्रिये ! तुम्हारी धर्मदृढ़ता सचमुच प्रशसनीय और आदरणीय है । तुम्हारे जैसी धर्मदृढता अगर परमात्मा के प्रति मेरी भी हो जाय तो मेरा भी कल्याण हो जाय और तुम्हारा भी कल्याण हो जाय । मैं अभी तक तुम्हे पहिचान ही नही सका था । चकवी की प्रेरणा से आज मैंने तुम्हे पहिचाना है । आज मेरे लिए बडे ही आनन्द का अवसर है ।

इस प्रकार पति और पत्नी के बीच साधारण वार्तालाप हुआ । दोनो बडे ही आनन्द के साथ परस्पर मिले और लम्बी रात तक एकान्त मे रहे । जब थोड़ी रात शेष रह गई और भोर होने का समय आ पहुचा प्रहस्त ने पवनकुमार को आवाज देकर कहा—मित्र ! चलो प्रभात होना ही चाहता है । रात्रि थोड़ी रह गई है । हमे अपने ध्येय को भूल नही जाना चाहिये ।

प्रहस्त का कथन सुनकर पवनकुमार जाने के लिए तैयार हो गया। तब अजना हाथ जोडकर कहने लगी—नाथ ! आज के समागम के फलस्वरूप यदि मेरे पेट मे गर्भ रह गया हो और सन्तान का जन्म हो तो वह सन्तान आपकी ही है, इस वात की साक्षी कौन देगा ? इस विषय को साक्षी दिये विना ही आप चले जाएगे तो सभव है कि मुझे और आपकी सन्तान को सकट मे पड़ना पडे । आपने यहां पधारने

की कृपा की है तो कृपा करके कुछ साक्षी भी दे जाइये ।

पवनकुमार—तुम्हारा कहना ठीक है । लेकिन मैं अपने यहा आने की घटना को अगर प्रगट कर दूगा तो भय है कि लोग मेरी निन्दा करेंगे । और यदि कोई साक्षी नही देता तो सम्भव है कि तुम्हे सकट मे पडना पडे । मेरी निन्दा भी न हो और तुम्हे सकट मे भी न पडना पडे इसके लिए मैं अपनी अगूठी तुम्हे देता हू । आवश्यकता पडने पर साक्षी के रूप मे इस अगूठी को काम मे लाना ।

८ : कलंक का आरोप

भवितव्यता प्रबल होती है । इसी कारण अंजना ने पवनकुमार का कथन मान कर अगूठी ले ली । पवनकुमार अगूठी देकर रातो-रात प्रहस्त के साथ विमान पर बैठकर अपने पडाव पर आ पहुचा ।

अजना गर्भवती हुई । उसे गर्भवती मानकर लोगो मे कानाफूसी होने लगी कि राजकुमार ने तो अजना का परित्याग कर दिया है, फिर वह गर्भवती कैसे हो गई ? राजकुमार युद्ध पर गये हैं । इसलिए अवश्य ही अजना ने दुराचार का सेवन किया है । लोगो की कानाफूसी धीरे-धीरे अजना की सास केतुमती के कानो तक पहुच गई । पहले तो केतुमती ने कहा—मेरी बहू ऐसी है ही नही । वह वडी सुशीला है । लेकिन दूसरी स्त्रियो ने खातिरी के साथ कहा कि अजना वास्तव मे गर्भवती है तव केतुमती वोली—मैं अभी वहू को बुलाती हू और सारी बात पूछती हू ।

केतुमती ने अजना को बुलाने के लिए एक दासी भेजी ।

साथ का बुलावा पाकर पहले तो अ जना को प्रसन्नता हुई। उसने सोचा यह—मेरा सौभाग्य है कि सासजी ने मुझे याद किया है पर दूसरे ही क्षण उसे नया विचार हो आया। वह सोचने लगी—सासजी ने अचानक ही बुला भेजा है तो इसका कोई विशेष कारण होना चाहिए। मगर अंजना विचारशील और धैर्यवती थी। उसने सोचा—जब मे सच्ची हू तो मुझे डर ही क्या है ? साच को क्या आच ? सास के पास जाने मे भय या सकोच करने की कोई आवश्यकता ही नही है।

इस प्रकार विचार कर अ जना धैर्य के साथ सास के पास पहुची। यथोचित प्रणाम करके वह नीचे बैठ गई। अ जना को देखते ही सास केतुमती समझ गई कि अ जना गर्भवती है। केतुमती को क्रोध चढ आया। उसने क्रूर स्वर मे अ जना से कहा—बहू ! तूने यह क्या काली करतूत कर डाली है ? मेरा पुत्र तो तेरा मुह भी नही देखता। फिर तू गर्भवती कैसे हो गई। तूने अपनी काली करतूत से मेरे कुल को कलक लगा दिया है। अभी तक मै समझती थी कि तेरे जैसी सरल बहू का त्याग करके पवनकुमार ने भूल की है। मगर तेरे लक्षण अब जान पडे है।

अ जना समझ गई कि सास को मेरे विषय मे भ्रम उत्पन्न हो गया है। अ जना ने सास का भ्रम मिटाने के लिए कहा—आप मुझे क्षमा कीजिए और मुझ पर विश्वास रखिए। आपका क्रोध उचित नही, क्योकि मेरे पेट में जो गर्भ है वह किसी दूसरे का नही, आपके पुत्र का ही है। आपके पुत्र विद्या के बल से, रात के समय लौटकर आये थे। इस सम्बन्ध मे मेरी यह दासी साक्षी है और उनकी

दी हुई अंगूठी भी साक्षी है। इतने से भी अगर आपको सन्तोष न हो तो अपने पुत्र को आ जाने दीजिये। उनसे पूछकर अपना सन्देह निवारण कर लेना।

केतुमती ने कहा—यह तेरी ही दासी है और स्वाभाविक है कि यह तेरा ही पक्ष ले। रही अंगूठी सो वह कही यो ही मिल सकती है। ऐसी अवस्था मे प्रबल साक्षी के बिना तेरे ऊपर भरोसा नही किया जा सकता। मुझे लगता है कि तूने दुराचार का सेवन किया है। नगर भर मे इसी बात की चर्चा हो रही है। राजकुमार के लौटने तक ऐसी स्थिति मैं तुझे घर मे कैसे रखा जा सकता है? कुल को कलकित करने वाली स्त्री को घर मे रख कर क्या और अधिक कलकित करना है?

इस प्रकार केतुमती अंजना पर अत्यन्त कुपित हुई। अंजना समझ गई कि इस समय सास के सन्देह को मिटाना मेरे वश की बात नही है। इसलिये अब कुछ अधिक कहना वृथा है।

अंजना चुप हो गई। उसकी चुप्पी से केतुमती का सन्देह और बढ़ गया। उसने समझा गर्भ मेरे पुत्र का नही है। अंजना झूठ बोल कर अपना पाप छिपा रही है। आखिर उसने अंजना को घर से निकल जाने का आदेश दे दिया। इसके बाद वह उठी और राजा प्रह्लाद के पास पहुंची। स्त्रियो के बहकावे मे आकर पुरुष आवेश मे आ जाते हैं और कैसे-कैसे अन्याय कर बैठते है, इसके अनेक उदाहरण इतिहास के पन्नो पर आज भी मौजूद हैं।

केतुमती ने राजा प्रह्लाद को अंजना सम्बन्धी सारा

वृत्तान्त सुनाकर कहा—बहू ने निष्कलंक कुल को कलंकित कर डाला है। ऐसी कुलटा बहू को घर मे रखने से कुल को अधिक कालिमा लगेगी और दुराचार का प्रचार होगा। इसलिए उसे घर से निकाल बाहर कर देना ही उचित है।

केतुमती ने इस प्रकार प्रह्लाद के कान भर दिये। राजा प्रह्लाद के लिये उचित तो यह था कि वह निष्पक्ष होकर सत्य-असत्य का निर्णय करता। लेकिन उसने ऐसा नही किया।

प्रह्लाद वोला—ऐसा है तो अब क्या करना चाहिये?

केतुमती—इस समय एक ही उपाय है कि अंजना को घर से निकाल कर उसे मायके भेज दिया जाय। किसी होशियार आदमी के साथ उसे भेजना होगा ताकि वह ऐसी जगह उसे छोड आवे कि अंजना अकेली अपने मायके पहुच सके। ऐसा करने से अपना कुल कलक से बच जायगा और प्रजा मे दुराचार भी नही फैलेगा।

९ : निर्वासन

राजा प्रह्लाद ने केतुमती की बात स्वीकार करली। उसने एक विश्वासपात्र और चतुर आदमी को बुलाया। सब कुछ समझा कर उसने कहा—अजना को रथ मे बिठलाकर कही ऐसी जगह छोड़ आओ कि वह स्वय अपने पिता के घर तक पहुंच जाय।

अंजना के गर्भ के सम्बन्ध मे प्रह्लाद जैसे न्यायी राजा ने सत्यासत्य का निर्णय नही किया। इसका कारण यही

अनुमान किया जा सकता है कि अंजना के कुछ पाप कर्म शेष रह गये होगे । कैसे कर्म उपार्जन किये गये है और वे कर्म किस प्रकार उदय मे आकर कैसा फल देते हैं, यह बात स्पष्टरूप से केवलज्ञान के बिना नही जानी जा सकती । हम लोगो को केवलज्ञान तो है नही, इस कारण केवलज्ञानी जो कुछ कह गये हैं उसी पर हम विश्वास रखना चाहिये ।

राजा प्रह्लाद का भेजा आदमी अजना के पास आया । उसने अजना से कहा- बैठिये, रथ तैयार है । रानीजी ने आपको बाहर घूमने के लिये रथ भेजा है । अजना समझ गई कि मुझे कहां जाना है । उसने बसन्तमाला को बुलाकर कहा- मेरे विषय मे भ्रम पैदा हो गया है, उसी का यह दुष्परिणाम है ।

बसन्तमाला ने कहा—सखी, यह तो भारी अनर्थ हो रहा है । आपकी आज्ञा हो तो मैं महारानी और महाराज के पास जाकर उनके सन्देह को दूर करने का प्रयत्न करूं ।

अजना—इस समय कोई भी प्रयत्न सफल होने की उम्मीद नही है । मौके पर मुझे सास-ससुर की आज्ञा का पालन करना ही उचित जान पडता है ।

सकट के समय ज्ञान का उपयोग किया जाय तो ही ज्ञान की सार्थकता है । अगर सकट के समय विवेक न रहा तो ज्ञान किस काम का ? विवेकहीन ज्ञान से कार्य की सिद्धि नही होती । ज्ञान को सफल एव सक्रिय बनाने के लिये विवेक की बडी आवश्यकता है । यहा यह देखना है कि सती अजना सकट के समय भी विवेक का उपयोग करके कैसी सहनशीलता दिखलाती है ?

वसन्तमाला को यह सब सहन न हो सका। वह अंजना के दुःख से दुःखी होकर रोने लगी। अंजना ने उसे धीरज बधाते हुए कहा—सखी तू रोती क्यो है? दुःख मेरे ऊपर आया है। फिर भी मैं तो रोती नही और तू रो रही है। क्या यह उचित कहा जा सकता है?

वसन्तमाला—मुझे रत्ती-रत्ती सच्ची बात मालूम है। तुम सर्वथा निर्दोष और पवित्र हो। फिर भी तुम्हारे माथे कलंक चढाया जा रहा है। बस इसी कारण मुझे रोना आ रहा है।

अंजना—कर्म की गति विचित्र है। होनहार होकर ही रहती है। फिर भी अन्त मे सत्य छिपा नही रहता। वह एक न एक दिन सूर्य की तरह चमक उठता है। सत्य का पालन करने मे संकटो का सामना करना ही पडता है। जिस रात्रि मे राजकुमार पधारे थे, तब तू प्रसन्न हुई थी। फिर आज दुःखी क्यो हो रही है? प्रत्येक स्थिति मे फूलना नही और दुःख मे घबराना नही चाहिये। सखी, तू मेरे लिये तनिक भी चिन्ता मत कर।

वसन्तमाला के साथ अंजना ऐसे सरल भाव से रथ मे बैठ गई जैसे मायके से कोई लिवाने आया हो और कुछ दिनो के लिये वहा जा रही हो। उस समय भी वसन्तमाला के चेहरे पर दुःख के चिह्न स्पष्ट झलक रहे थे, मगर अंजना सती अत्यन्त गम्भीर और शान्त थी। उसके चेहरे पर घबराहट या वेदना का कोई निशान नही था।

शरीर मे आसुरी और दैव बल के बीच सदैव युद्ध

होता रहता है । इस युद्ध मे अगर दैवी प्रकृति की जीत होती है तो यही सच्ची विजय है । कदाचित् दैवी प्रकृति दब जाय ओर आसुरी प्रकृति प्रकट हो जाय तो उस दशा मे आत्म-हानि ही होती है ।

अ जना ने कष्ट सहन करना कबूल किया, पर दैवी प्रकृति का परित्याग करके आसुरी प्रकृति की शरण मे जाना स्वीकार नही किया । साधारण मानवी के हृदय मे ऐसे सकट के समय भाति-भाति के सकल्प-विकल्प उत्पन्न होना स्वाभाविक है । मगर अ जना ने अपने हृदय मे संकल्प–विकल्प को जरा भी स्थान नही दिया । वह यही सोचती थी कि मुझे जो दु.ख भोगना पड रहा है वह सब मेरा ही पैदा किया हुआ है । शास्त्रकारो का कथन है कि किए हुए कर्मों को भोगे बिना छुटकारा नही । ऐसी दशा मे अगर मुझे अपने किये कर्मों के फलस्वरूप दु ख भोगना पड रहा है तो इसमे दूसरे का क्या दोष है ?

अपने ही कर्म भोगने पडते है, यह जैन धर्म का मौलिक सिद्धान्त है । सुख या दु ख, जो भी भोगा जाता है, वह सब अपने ही कर्मों का फल है । गीता मे भी कहा है–न परमात्मा किसी से कर्म कराता है और न कर्मों का फल ही देता है । प्रश्न किया जा सकता है कि अगर परमात्मा कर्म का फल नही देता तो कौन देता है ? इसका उत्तर यह है कि जैसे शक्कर मे से मिठास और मिर्च मे से तीखा–पन स्वभाव से ही निकलता है, उसी प्रकार कर्म का फल भी कर्म के स्वभाव से ही मिलता है । इस कथन के अनुसार कर्म का कर्त्ता भी आत्मा है और भोक्ता भी आत्मा

ही है । सिद्धान्त की इस बात पर दृढ आस्था रखने से आत्मा को शाति ही मिलती है । जो व्यक्ति कर्म के इस सिद्धान्त पर सुदृढ श्रद्धा रखता है, उसे प्रत्येक परिस्थिति मे, चाहे वह कैसी भी प्रतिकूल क्यो न हो, दुःख का अनुभव नही होता ।

चलते–चलते रथ निर्जन वन मे जा पहुचा । अ जना ने सारथी से कहा—मेरे साथ–साथ तुम कहां तक कष्ट उठाते रहोगे ? साफ-साफ कह दो कि तुम क्या करना चाहते हो ?

सारथी ने राजा प्रह्लाद की आज्ञा बतलाते हुए कहा—मैं आपको महेन्द्रपुर के मार्ग पर छोड देना चाहता हू ।

अ जना—महेन्द्रपुर यहा से पास ही है और इधर का रास्ता मुझे मालूम है । अब तुम अधिक कष्ट मत उठाओ ।

सारथी ने दु खपूर्ण हृदय से, हाथ जोडकर कहा—"मैं विवश हू देवी कर्त्तव्य के वश होकर मुझे यह घोर कृत्य करना पड़ता है । मैं ऐसा करते हुए अत्यन्त दु खी हू ।" इतना कहकर सारथी रोने लगा ।

अ जना ने सान्त्वना देते हुए कहा—तुम रोते क्यो हो ? आखिर तो मेरे दु ख से रो रहे हो न ? लेकिन जब मैं स्वय दु ख नही मना रही हू तब तुम क्यो दु'खी होते हो । तुमने आज्ञा का पालन किया है, इसलिए तुम्हे प्रसन्न होना चाहिये और महाराज से कहना चाहिये कि मैने आपकी आज्ञा का बराबर पालन किया है ।

इस प्रकार धीरज बधाकर अ जना ने उस आदमी को

रवाना कर दिया । अंजना ने वसन्तमाला से कहा तू मेरे साथ क्यो वृथा कष्ट सहती है ? तेरी इच्छा हो तो लौट जा !

वसन्तमाला बोली—आज तक मैं तुम्हारे साथ रही हू। कष्ट के समय तुम्हे कैसे छोड़ सकती हू ।

पुज्यश्री श्रीलालजी महाराज ने व्याख्यान देते हुए कहा था—एक बार वन मे दावानल लगनें के कारण एक वृक्ष जलने लगा। उस वृक्ष पर एक पक्षी ने घोसला बना रखा था। जब वृक्ष जलने लगा तो उसने पक्षी से कहा—मेरे पख नही है, इस कारण मुझे जलना पड रहा है। पर तुम्हारे तो पख हैं। तुम मेरे साथ क्यो जल रहे हो ?

दव लाग्यो तरुवर जले, पंखी माला माय ।
हुं तो जलु रे पांख बिन, तू क्यो नही उड़ जाय ।।
पान बिगाड्या फल चाख्या, रम्यो तो हंदी डाल ।
तूं तो जले मुझ देखतां, म्हारे जीवणो कितनो काल ।।

अर्थात्—वृक्ष के पूर्वोक्त कथन के उत्तर मे पक्षी कहने लगा—मैंने तुम्हारे पत्ते बिगाडे है, तुम्हारे मीठे फल चखे हैं और तुम्हारी डालियो पर कूदफाद की है। आज मेरे देखते-देखते जल रहे हो। मुझे कितने दिन जीना है जो ऐसी परिस्थिति मे तुम्हे छोडकर उड़ जाऊ ? मैं तुम्हे छोडकर चला जाऊ तो मेरे जीवन को धिक्कार है ! इस-लिए भाई ? तुम्हारी गति सो मेरी गति ।

इसी प्रकार वसन्तमाला ने भी अंजना से कहा—अब तक मैं तुम्हारे साथ रही । खूब खाया पीया और आनन्द

किया। अब ऐसे सकट के समय तुम्हे अकेली छोड़ कर मै कैसे जा सकती हू ? नही सखी, यह मुझसे नही होगा।

अजना समझ गई कि वसन्तमाला मुझे किसी भी प्रकार छोडेगी नही। इसके हृदय मे मेरे प्रति स्नेह है। यह मेरे साथ आना चाहती है तो भले आवे।

रात हुई। दोनो ने जगल मे रात व्यतीत की। अंजना रात भर भगवान् का स्मरण करती और उपकार मानती रही।

प्रातःकाल होने पर वसन्तमाला ने कहा—सखी, महेन्द्रपुर जाने का मार्ग यह है। चलो, इस मार्ग से महेन्द्रपुर चले। पिताजी तो वहा आश्रय देंगे ही।

अजना—सखी ! तुम माता–पिता के घर आश्रय मिलने की आशा करती हो पर मुझे ऐसी आशा नही है। मैं श्वसुर के घर से निकाली गई हू। ऐसी दशा मे माता-पिता के घर भी आश्रय नही मिलेगा।

वसन्तमाला तुम्हारा कथन किसी दृष्टि से ठीक है, फिर भी मुझे विश्वास है कि पिताश्री अवश्य आश्रय देगे।

१० : मायके के द्वार पर

अजना के माथे कलक का जो टीका था, वह मानो विपत्ति का पहाड था। प्रतिष्ठित पुरुप के लिये अपकीर्त्ति मृत्यु से कम नही है। वल्कि उन्हे अपकीर्त्ति मृत्यु से भी वढकर दुःखदायिनी होती है। यही कारण है कि कई लोग अपकीर्त्ति की वेदना से वचने के लिये आत्महत्या तक कर

डालते हैं। यद्यपि यह मार्ग ग्रहण करने योग्य नही है, फिर भी इससे इतना पता तो चलता ही है कि जो लोग अपकीर्त्ति से बचने के लिए मौत का आश्रय लेते हैं, वे मौत की अपेक्षा अपकीर्त्ति के दु ख को अधिक समझते हैं।

अजना की भी अपकीर्त्ति हुई थी। अपकीर्त्ति के कारण उस पर दु ख का पहाड आ पडा था। फिर भी उसे घबराहट नही हुई, क्योकि उसे अपनी आत्मा पर भरोसा था। अपने को कलकित करने के लिये उसने किसी को दोषी नही ठहराया। केवल यही सोचती थी कि यह सारा अपराध मेरी आत्मा का ही है। जब आत्मा अपने अपराध का फल भोग लेती तो कष्ट प्रकट हो जायगा कि मैं सच्ची पतिव्रता थी। इस समय तो मुझे अपने को शान्त और दान्त ही रखना हे। इसी मे मेरा कल्याण है।

अजना के कष्ट देखकर वसन्तमाला घबरा उठी थी। अजना ने उसे धीरज बधाते हुए कहा--सखी, मैंने जो पहले कर्म किये हैं, उनका फल मुझे भोगना ही पडेगा। कर्म को भोगते समय दु ख मानना व्यर्थ है। मै पाप से डरती हू, पाप के फल से नही।

आखिर वसन्तमाला के कहने से अजना महेन्द्रपुर नगर के दरवाजे पर पहुची। उसने द्वारपाल को अपना परिचय देकर कहा—"पिताजी के पास जाकर उन्हे मेरे आने की खबर दे दो।"

द्वारपाल अजना को पहिचान कर कहने लगा - आप राजकुमारी होकर भी ऐसी हालत मे कैसे पधारी हैं।

अंजना ने स्पष्टीकरण किया मेरे ऊपर संकट आ पड़ा है। मुझ पर पर-पुरुष द्वारा गर्भ धारण करने का आरोप लगाया गया है। सास-ससुर ने मुझे घर से बाहर निकाल दिया है।

अंजना ने सारा वृत्तान्त सुना दिया।

द्वारपाल ने राजा से जाकर कहा—महाराज! राजकुमारी आई हैं।

राजा ने प्रसन्न होकर कहा अंजना का आना प्रसन्नता की बात है। जल्दी जाओ, नगर को सजाने की आज्ञा देदो और अंजना को आदर के साथ लिवा लाओ॥

द्वारपाल महाराज, आपका आदेश प्रमाण है, परन्तु राजकुमारी ऐसी स्थिति मे नही आई है कि उन्हे इस प्रकार आदर के साथ नगर मे लाया जाय। इस समय वह सुन्दर स्वागत के योग्य नही है।

इतना कह कर द्वारपाल ने अंजना का कहा हुआ सब वृत्तान्त राजा को सुनाया। वृत्तान्त सुनकर राजा महेन्द्र के दुख का पार न रहा। उन्होने व्यथित हृदय से मन ही मन विचार किया—वास्तव मे मेरे दामाद अंजना से रुष्ट थे। इस रोप के कारण मेरे द्वारा प्रेम और उत्साह के साथ भेजी हुई भेंट भी उन्होने स्वीकार नही की थी। ऐसी अवस्था मे अजना अनाचार का आश्रय लेकर गर्भवती हो, यह निसदेह कलक की वात है। मेरी पुत्री होकर भी उसने शील और ब्रह्मचर्य की मर्यादा खडित कर दी। फिर कुकर्म करके वह यहा आई है। कलकित पुत्री को मैं आश्रय नही दे सकता।

राजा ने द्वारपाल से कहा—दुख के साथ अंजना से

कह देना कि कलकित दशा मे मै उसे आश्रय नही दे सकता। वह जहा जाना चाहे, जा सकती है। मेरे राज्य की सीमा मे उसे कही स्थान नही मिल सकता।

राजा का यह कठोर आदेश सुनकर उनके मत्री ने कहा - महाराज, आप आज्ञा देने मे कुछ उतावली कर रहे हैं। आज्ञा देने से पहले सत्य-असत्य का निर्णय कर लेना चाहिये। निर्णय करने से पहले इतना कठोर आदेश देना अनुचित प्रतीत होता है। मेरी विनम्र सम्मति यह है कि आप स्वय अ जना के पास पधारे, सब वृत्तान्त विदित करें और फिर पवनकुमार से इस सम्बन्ध मे पूछवा लें। इतना करने के बाद अगर अ जना अपराधिनी जान पडे तो उचित कार्यवाही करे।

प्रधान का कथन उचित था। पर कर्म की लीला विचित्र होती है। इस कारण राजा ने उसकी बात नही मानी और कहा—तुम्हारी बात ठीक है, फिर भी कलंकित पुत्री को इस समय स्थान देने से मेरा कुल कलंकित होगा और प्रजा पर इसका प्रभाव बुरा पडेगा। प्रजा को यह कहने का अवसर मिलेगा कि राजा दूसरो को सदाचार का उपदेश देता है, दुराचारी को दण्ड देता है फिर भी अपनी लडकी को दुराचार करने पर भी घर मे आश्रय देता है या अपने राज्य मे रखता है। प्रजा की इतनी टीका भी मैं नही सुनना चाहता। अतएव मैंने जो यह कह दिया—वही मुझे ठीक जान पडता है।

राजा महेन्द्र फिर कहने लगे अब अ जना मेरी है भी नही। वह अपने सास--ससुर की है। जब उसकी सास ने

हो उसे निकाल दिया है तो मैं कैसे रख सकता हूं ?

मंत्री—जान पडता है, अंजना की सास का स्वभाव खराब है। ऐसा न होता तो उसने पवनकुमार के आने की राह देखी होती। उसने पवनकुमार की राह न देख कर उतावली मे अंजना को निकाल देने का अनुचित कार्य किया है तो क्या आपको भी यही करना उचित हैं ? मैं तो अब भी यही उचित समझता हू कि पवनकुमार के आने तक अंजना को अगर राजमहल मे न रख सकते हो तो कही दूसरी जगह रख दीजिये। जब तक सत्य-असत्य का निर्णय नही हो जाता तब तक उसे सर्वथा आश्रयहीन करना किसी भी दृष्टि से उचित नही है।

राजा–तुम क्षत्रियो की पद्धति नही जानते और इसी कारण ऐसा कह रहे हो। मैं अपनी पुत्री को भी स्थान नही दूंगा तो प्रजा यही कहेगी कि राजा को पुत्र या पुत्री प्रिय नही, धर्मप्रिय है। धर्म की रक्षा के लिये राजा अपने प्रिय जनो का भी त्याग कर सकता है। इस दृष्टि से मुझे तो यही उचित दिखाई देता है कि पुत्री अंजना को राज्य मे स्थान न दिया जाय।

राजा महेन्द्र का निर्णय एक दृष्टि से क्रूरतापूर्ण होने पर भी दूसरी दृष्टि से देखा जाय तो उचित भी प्रतीत होगा। राजा को अपनी पुत्री प्रिय तो थी ही, फिर भी उसने उसे आश्रय नही दिया जिससे कि प्रजा मे दुराचार सेवन करने की भावना उत्पन्न न हो। धर्म की रक्षा करने के लिये ऐसा करना आवश्यक हो जाता है। धर्म का पालन करने के लिये दृढता की आवश्यकता होती है।

राजा का कथन सुनकर मन्त्री ने विचार किया– अब अधिक कहना वृथा है। तब निराशा और उदास भाव से उसने द्वारपाल से कहा– तो तुम अंजना के पास जाकर उससे कह दो कि यहां तुम्हारे माता-पिता या भाई-बहिन वगैरह कोई नहीं हैं। तुम्हारे लिये सारा परिवार और राज्य वीरान है।

अंजला के पास जाकर द्वारपाल ने सारा वृत्तान्त सुना दिया। राजा और राजमन्त्री के बीच जो बातचीत हुई थी, वह भी उसने अजना को सुना दी। द्वारपाल का निराशाजनक कथन सुनकर वसन्तमाला रोती-रोती कहने लगी—सखी! अब हम कहा जाएगी? ससुर के घर आश्रय न मिलने पर मायके का आश्रय लिया जाता है। जब मायके मे ही आश्रय न मिले तो अन्यत्र कहा मिल सकता है?

- वसन्तमाला को तसल्ली देते हुए अंजना ने कहा— मैंने तुम्हारे कहने से आश्रय पाने के लिये यहा एक प्रयोग किया था। यह प्रयोग सफल नही हुआ। मुझे पहले ही आशा नही थी कि यहा आश्रय मिल सकेगा। पिताजी मुझे प्यार करते है, फिर भी उन्हे अपनी परिस्थिति का विचार तो करना ही पडेगा। परिस्थिति के कारण ही उन्होने ऐसा कहलाया है। तू चाहे तो पिता के घर रह सकती है। तुझे अवश्य आश्रय मिल जायगा। रही मेरी बात, सो जहां मेरी अन्तरात्मा ले जाएगी, वही मैं चली जाऊंगी।

वसन्तमाला –आखिर तुम्हारी अन्तरात्मा कहा जाना चाहती हैं?

अंजना—सभी ने मेरा तिरस्कार किया है पर जगल ऐसा नही करेगा? मैं किसी जगल का ही आश्रय लूंगी।

११ : वनवास

वन मे रहने का महत्त्व कितना है, यह बतलाने के लिये इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि अनेक लोग राज-पाट तज कर वन मे जाना पसन्द करते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि जैसी शाति वन मे प्राप्त हो सकती है, वैसी कही भी दूसरी जगह सम्भव नही है। जगल मे मंगल की भावना रखने से किसी भी प्रकार का दुःख नही जान पड़ता। आज तो जगल से भी परतन्त्रता का प्रवेश हो गया है और गाय जैसे मनुष्योपयोगी प्राणियो को भी वहा घास चरने की छूट नहीं मिलती, पर प्राचीन काल में जगल सबके लिये खुला था। वहा किसी प्रकार का प्रति वन्ध नही था। जो लोग स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करने की इच्छा रखते थे, वे जगल के फल फूल-खाकर अपना जीवन-निर्वाह कर लेते थे। लेकिन आज (Forest tex) जगल कर लगा लगा दिया गया है और इस प्रकार जंगल की मगलता मे विघ्नबाधा उपस्थित कर दी गई है।

वसन्तमाला ने चकित होकर कहा—राजकुमारी, क्या तुम वन मे रहने योग्य हो ? क्या जगली फल-फूलो पर तुम निर्वाह कर सकोगी ? क्या जगल मे जमीन पर सो सकोगी ?

अंजना ने गहरा विचार करके कहा—मैं सव कष्ट सहने के लिये तैयार रहूगी इसके अतिरिक्त जगल मे न जाऊ तो जाऊ कहा ?

वसन्तमाला—चलो न, हम स्वय पिताजी के पास

चले । एक वार सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनाकर आश्रय देने की प्रार्थना करे ।

अजना सखी मुझसे यह न होगा । जब पिताजी ने एक बार उत्तर दे दिया है कि मैं उनके राज्य की सीमा मे न रहू, तब राज्य मे रहने की प्रार्थना कैसे कर सकती हू ? कहा भी है—

आव नहीं आदर नहीं, नहि नैनन मे नेह,
तुलसी तहां न जाइये, कंचन बरसे मेह ।
आव जहा आदर जहां, जहां नैनन मे नेह,
तुलसी तहां तो जाइये, पत्थर बरसै मेह ॥

पिताजी ने मेरा आदर नही किया इतना ही नही वरन् राज्य की सीमा से वाहर निकल जाने की आज्ञा दी है तो इस स्थिति मे मैं आश्रय देने के लिये प्रार्थना नही कर सकती । मै जगल के कष्ट खुशी-खुशी सह लू गी पर पिताजी के पास प्रार्थना करने नही जाऊगी । सखी तू जाना चाहती हो तो खुशी से चली जा । मैं आग्रहपूर्वक कहती हू कि तुझे मेरे साथ रह कर कष्ठ भोगने की आवश्यकता नही है । मैं तो अब जगल मे ही रहूगी । मैं सर्वथा निष्कलक हू, फिर भी ससुराल मे और मायके मे भी मुझे कलग लगा है और मैं आश्रयहीन बना दी गई हू, मगर वन निराश्रितो का आश्रय है । वह समान रूप से सभी का स्वागत करता है । अतएव मैंने वन मे रहने का निश्चय किया है । गर्भवती न होती तो मैं अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करने मे स्वतन्त्र थी । गर्भवती होने के कारण मैं विवश हू । गर्भ की रक्षा

करना आवश्यक है । इसलिए दूसरा कोई विचार न करके वन मे जाने का ही मैंने निश्चय कर लिया है ।

गर्भ की रक्षा करना माता का आवश्यक कर्त्तव्य है। गर्भ की रत्रा करने के निमित्त माता को किस प्रकार की सावधानी रखनी चाहिये यह बात ज्ञाता-सूत्र मे बतलाई गई है । उसका सार थोडे मे यही है कि जिस प्रकार गर्भ की रक्षा हो, उसे शान्ति मिले, उसी प्रकार का वर्ताव करना चाहिये । आज कितनीक माताए गर्भवती होती हुई भी तपस्या करने बैठ जाती हैं । यह उचित नही है । जिन्हे तप ही करना है उन्हे ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये जिससे गर्भ ही न रहे । और जो ब्रह्मचर्य पालन नही कर सकती उन्हे गर्भ रहने के बाद इस प्रकार वर्तना चाहिये, जिससे गर्भ की हत्या होने की सम्भावना न रहे ।

गर्भ की रक्षा करना अ जना ने अपना कर्त्तव्य समझा। अ जना के कथन के उत्तर मे वसन्तमाला ने कहा—सखी, जैसा उचित समझो, करो । मैं तुम्हारे साथ ही हू। तुम्हे छोडकर कहा जा सकती हू ?

अ जना ने सोचा यह मुझे त्याग कर अपने पिता के घर नही जायगी । तब वह बोली वसन्तमाला ! अगर तुम मेरे साथ ही रहना चाहती हो तो खुशी से रहो । मैं वन मे रह कर आत्मा की ज्योति जगाऊगी ।

सारे महेन्द्रपुर नगर मे विजली के वेग से यह समाचार फैल गया कि राजकुमारी अ जना मायके आई थी, लेकिन राजा ने उन्हे आज्ञा दी है कि वह मेरे राज्य मे भी नही रह

सकती। प्रजा मे सदाचार के विरुद्ध कोई भावना न उत्पन्न होने पावे, इस विचार से राजा ने अपनी प्रिय पुत्री को भी घर मे आश्रय नही दिया है। राजा के इस निर्णय को सुन कर लोग स्तम्भित रह गये। सभी जानने थे कि अंजना महाराज की लाडली बेटी है। फिर भी उन्होने सत्य-असत्य का निर्णय नही किया और राजकुमार के आने तक भी अंजना को आश्रय नही दिया। समझदार प्रजाजनो ने इस सम्बन्ध मे राजा से पुन. विचार करने की प्रार्थना करने का विचार किया। फिर उन्होने सोचा—जब तक हम लोग महाराज के पास पहुचेगे तब तक न जाने अंजना कहां जा पहुचेगी। अतएव सबसे पहले अंजना के पास जाना ही उचित होगा और पुनर्विचार होने तक उसे यहा रोक लेना चाहिये।

नगर के प्रतिष्ठित प्रजाजन अंजना के पास पहुचे। अंजना को आकृति से ही उन्हें जान पडा कि वह निर्दोष है।

प्रजाजनो ने अंजना से कहा—आप कहा जा रही है ?

अंजना—पिताजी ने जहा जाने का हुक्म दिया है वही जा रही हू।

प्रजाजन—महाराज ने जो आज्ञा दी है, वह आपको दोषी समझ कर दी है। पर आप तो निर्दोष दिखाई देती हैं। अतएव आप कही न जायें, रही रहे।

अंजना—मेरे लिये पिताजी की आज्ञा मानना आवश्यक है। मैं अब राज्य की सीमा मे कैसे रह सकती हू ? मेरे लिये तो यही उचित है कि मैं जल्दी से जल्दी

राज्य की सीमा से बाहर चली जाऊं ?

प्रजाजन – आपका यह कोमल शरीर क्या वन मे रहने योग्य है ? आप वन मे कष्ट सहन कैसे करोगी ?

अ जना—जिस शरीर को आप कोमल मान रहे हैं उसने अनेक कष्ट सहे है। सासरे मे तो मुझसे कोई बोलता तक नही था। जब मैं अनेक कष्ट भोग चुकी हू तो वन के कष्ट कौनसी बडी बात है ?

प्रजाजन—सासरे मे भी आपको इतने कष्ट भोगने पडे है, यह बात तो हमे आज ही मालूम हुई। खैर, जो हुआ सो हुआ। अब आप यही रहिये। पवनकुमार आपको खोजते हुए जब यहा आयेंगे तब सच्चाई आप ही प्रकट हो जायेगी।

अ जना –मैं आपकी बात मानू या पिताजी की आज्ञा मानू ? आप लोगो को मेरे प्रति स्नेह और सद्भाव है, उसकी मैं प्रशसा करती हू, फिर भी यहा रहने मे असमर्थ हू। मेरे यहा रहने से पिताजी की आज्ञा का उल्लंघन भी होगा और राजा–प्रजा के बीच विग्रह भी होगा। मैं अपने स्वार्थ के लिये राजा और प्रजा के बीच विग्रह होना नही चाहती। मेरा यहा रहना धर्म से पतित होना है। अतएव मैंने वन मे ही रहने का विचार कर लिया है। जब पति लौटेंगे और सत्य बात प्रकाश मे आयेगी, तब देखा जायगा।

प्रजाजन सोचने लगे—अ जना अपराधिनी होती तो उसके दृढता भरे शब्द न निकलते। इससे भी अ जना की निर्दोषता सिद्ध होती है। इस ससार में परिवाद निर्दोष आत्माओ को भी भोगने पडते हैं। इनके कार्य मे हम लोगो को विघ्न नही डालना चाहिए।

प्रजाजन अजना से क्षमा माग कर लौट आये और अजना तथा वसन्तमाला ने वन की और प्रस्थान किया। लौटने वाले प्रजाजनो मे कोई-कोई कहता था कि राजा ने सत्य-असत्य का निर्णय किये बिना ही राजकुमारी को कष्ट दे डाला है। कोई कहता राजा को अपनी पुत्री प्यारी तो होगी ही फिर भी जव उन्होने इतनी कठोर आज्ञा दी है तो आश्रय ही अजना ने कोई अपराध किया होगा। इस प्रकार दोनो तरह के लोग थे।

इस घटना से हमें सोचना है कि हम वास्तव मे कैसे वनें ? शास्त्र मे श्रावक के लिये, दूसरे व्रत मे सहस-ब्भक्खाणे नामक अतिचार वतलाते हुये कहा गया है कि श्रावको को विना जाने किसी पर दोषारोपण नही करना चाहिए। अगली पिछली वात जाने विना किसी को दोष लगा देने मे "सहसब्भक्खाणे" नामक अतिचार लगता है। हमे तो अपने सत्य व्रत का ही विचार करना चाहिये। सच्चे श्रावक तो साधुदर्शन, व्याख्यानश्रवण और धर्मकृत्यो के साथ अपने व्रतो का बरावर पालन करते हैं। सच्चे श्रमणोपासक साधुओ को अपना आदर्श मानकर आदर्श के अनुसार ही अपना व्यवहार बनाने की चेष्टा करते है।

अजना, वसन्तमाला के साथ वन मे पहुची। वहा पहुचने के वाद वसन्तमाला ने कहा- अब हमे क्या करना चाहिये ?

अजना—सखी, हम यही इसी वन मे रहेगी। यहा रहते क्या करना होगा, यह मैंने सोच रखा है। वन मे हमे इस कार्यक्रम के अनुसार कार्य करना है—

सखी ! हम आत्मस्वरूप ही ध्यावेंगी।
मात-पिता भाई को दोष नही देवेंगी,
हम अपने स्वरूप मे आपको विचारेंगी।
तत्त्व की गुफा में बैठ मोह की भ्रमणा मेट,
सत्यव्रत से तो प्रेम-दया दिल लावेंगी।
जीव न सतावेंगी स्तेद हटावेंगी,
ब्रह्मचर्य व्रत धार ममता को मारेंगी।
प्रभु से तो प्रीति जोड जगत् से नाता तोड,
आनन्द वढावेंगी परम सुख पावेंगी।
दुनिया दुरगी जान इस मे न देवे ध्यान,
मन भ्रमणो को त्याग आत्मा को तारेंगी।

अंजना कहती है -वन मे रहना उन्हे रुचिकर नही होता, जिनके पास वन मे रहने योग्य कार्यक्रम नही होता। हमारे पास तो वन के योग्य कार्यक्रम मौजूद है। ससार मेरा तिरस्कार करता है जबकि वन मेरा सत्कार करता है। दुनिया की मूर्खता देख-देख कर मुझे हसी आती है। लोग मुझे कलकित कहते हैं परन्तु वन ऐसा नही कहता। अतएव मैं वन मे रह कर ही आत्मा का चिन्तन मनन करूगी। वडी कठिनाई से वन मे रहने का यह अवसर मिला है। यह दु ख का समय भी मेरे लिये तो आनन्ददायक बन गया है। जो मनुष्य बात-बात मे दु.ख का अनुभव किया करता है, उसका सारा ही जीवन दु.खमय बन जाता है। इसके विरुद्ध सुख मानने पर सुख ही मालूम होता है। वस्तुत सुख और दु ख का कर्त्ता आत्मा ही है। आत्मा जब दुःख

को सुख के रूप मे ग्रहण करता है तो वह दु ख भी सुख के रूप मे परिणत हो जाता है। जो लोग सुख-दु ख का कर्त्ता आत्मा के अतिरिक्त किसी अन्य को मानते है वे भ्रम मे हैं। मैं भ्रम मे नही हू। अतएव दु ख के समय भी आनन्द का अनुभव करती हू। मेरी इच्छा यह भी है कि पदार्थों का पृथक्करण करते-करते मैं आत्मतत्त्व तक पहुच जाऊ। यह मेरी आत्मा का ही दोष है कि मैं पति, सास, ससुर और माता-पिता को भी अप्रिय लगी। अब इस वन मे रहकर मैं अपने उस दोष को दूर करने का प्रयत्न करूगी। मैं तत्त्व की गुफा मे बैठ कर मोह का भ्रम हटाऊगी और आत्मतत्त्व का ध्यान करूगी। माता-पिता आदि कुटुम्बी-जनो ने मुझे आत्मचिन्तन करने का अच्छा अवसर प्रदान किया है। इसके लिये मैं उनका उपकार मानती हू। तत्त्व का विचार करके मैं प्राणी मात्र पर दया करने का अभ्यास करूगी और किसी भी जीव को नही सताऊगी। सत्यव्रत का पालन करूगी, क्योकि अहिंसा और सत्य के द्वारा ही आत्मा का कल्याण हो सकता है। इसलिये इन दोनो व्रतो का पालन करने के साथ अस्तेयव्रत, ब्रह्मचर्य और सन्तोष-व्रत का भी मुझे पालन करना है। इस प्रकार अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और सतोप इन पाच व्रतो द्वारा मैं अपनी आत्मा का कल्याण साधूगी।

अ जना की बात सुनकर वसन्तमाला बोली इन व्रतो का पालन तो महेन्द्रपुर में रहने पर भी किया जा सकता था, फिर इसके लिये ऐसे घोर जगल मे आने की क्या आवश्यकता थी ?

अ जना—सखी, महेन्द्रपुर मे रहने से पिता की आज्ञा

का पालन न होता और संभव है कि राजा तथा प्रजा के वीच झगडा खडा हो जाता। वन मे रहने से यह कुछ भी नही होगा वल्कि आत्मचिन्तन के लिये एकान्त मिलेगा और गर्भ की रक्षा भी हो जायेगी।

वसन्तमाला को इस प्रकार समझाकर अ जना ने वन मे आगे प्रस्थान किया। भूख लगना शरीर का स्वाभाविक धर्म है। वसन्तमाला ने अ जना से कहा—अब हमने राज्य की सीमा पार करली है और इतना अधिक चलने से भूख लग आई है। अव क्षुधा शात करनी चाहिये।

अ जना—भूख लगी है तो वनदेवी ने भूख मिटाने की सामग्री भी अपने लिये तैयार कर रखी है।

इसके वाद वन के फल-फूलो से दोनो ने अपनी भूख मिटाई और ठडा पानी पीकर आगे प्रस्थान किया।

१२ : मुनिदर्शन

अ जना और वसन्तमाला धीरे-धीरे वन मे आगे वढी चली जा रही थी कि एक वृक्ष के नीचे ध्यान मे मग्न एक महात्मा दिखाई दिये। महात्मा के दर्शन करके अ जना वहुत प्रसन्न हुई। वह सोचने लगी- इस वन मे महात्मा पुरुप के दर्शन होना वडे सौभाग्य की वात है। महात्मा पुरुप भी वन का ही आश्रय लेते हैं क्योकि नगर मे अनेक प्रकार की झझटें लगी रहती हैं और वन मे किसी भी प्रकार की झझट नही होती।

अंजना ने वसन्तमाला से कहा— सखी, हम वन मे न

आती तो ऐसे तेजस्वी महात्मा के दर्शन कहा होते ? अगर पिताजी ने कृपा न की होती तो हमे वन मे आने का अवसर कैसे मिलता ?

वसन्तमाला—पिताजी ने आपको जंगल भेजकर बडा भारी अनुग्रह किया है। उनकी कृपा की कहा तक तारीफ की जाय। यो तो कहती नही कि पिता ने क्रूरता का परिचय दिया है। अगर जगल मे उन्होने न भेजा होता तो खाने, पीने और रहने का यह कष्ट ही क्यो भोगना पडता ?

अजना—सखी, तू बिना विचारे बोल रही है। तेरा कथन भूल से भरा है। पिता प्रसन्न होते तो नगर मे खाने-पीने का सुभीता हो जाता, पर इस जगल मे इन निष्परिग्रह महापुरुष से हमारा क्या मिलना होता ? तेरी यह मान्यता भ्रमपूर्ण है। हमे जो कुछ मिल रहा है, यदि वह अच्छा है तो मानना चाहिये कि वह सब इन्ही महात्मा के प्रताप से मिला है। जिस वस्तु को हम अच्छी समझे वह धर्म के प्रताप से ही मिलती है। धर्मतत्त्व को समझाने वाले और धर्म की ओर ले जाने वाले यह महात्मा ही हैं। इस लोक और परलोक सम्बन्धी सुखो की चाबी इन महात्माओ के हाथ मे ही है। इनकी सेवा करने से सब सुख सुलभ हो जाते हैं।

अजना ने दूर से ही उन्हे वन्दन-नमस्कार किया और फिर धीमे स्वर मे वसन्तमाला से कहा—सौभाग्य से ही हमें इन मुनिराज के दर्शन हो सके है। देख तो, मुनि पद्मासन लगा कर नासिका पर दृष्टि स्थिर करके तथा मन, वचन और कार्य को एकाग्र करके कैसे शान्त भाव से बैठे है। यह मुनि महात्मा तो साक्षात् शान्तिमूर्ति है। यह शास्त्र मे

इम समकित मन थिर करो, पालो निरतिचार,
मनुष्य-जन्म छे दोहलो, ममता जगत मझार ।
बिन कीधा जागे नही, कीधा कर्म जो होय,
कर्म कमाया आपणा, तेथी सुख-दुःख होय ।

ज्ञानी जनो ने दु ख मे भी मन को स्थिर रखने का उपाय बतलाया है कि चाहे सुख मिले, चाहे दु ख मिले, दोनो को अपने किये हुए कर्मो का ही फल समझो । ऐसा समझने से मन शात और स्थिर होगा । अ जना ने सुख और दु ख को अपने ही कर्मो का फल मानकर स्वभाव का अभ्यास किया था । यही कारण है कि उसका मन शान्त और स्थिर था ।

१३ : पूर्वभव का वृत्तान्त

अ जना के प्रश्न के उत्तर मे मुनि कहने लगे—कर्म की लीला विचित्र है । जैसे छोटे से बीज मे से विशाल वट-वृक्ष पैदा हो जाता है, उसी प्रकार कर्म भी लीला है । मैं तुम्हारे कर्म के विषय मे पूरी बात तो नही कहता, फिर भी कुछ बाते बतलाता हू, जिनके सुनने से तुम्हे कर्म की विचित्र लीला का पता चल सकेगा ।

महात्मा ने अ जना की कर्मकथा कहते हुए बतलाया—"अ जना, तू पूर्वभव मे एक राजा की रानी थी । तेरी एक सौत भी थी । सौत के एक पुत्र उत्पन्न हुआ । यद्यपि सौत के पुत्र को तुझे अपना ही पुत्र मानकर प्रसन्नता होनी चाहिये थी, परन्तु तेरे मन मे यह ईर्ष्या उत्पन्न हुई कि सौत के पुत्र है तो मेरे पुत्र क्यो नही है ?"

करने का षडयंत्र रचा है। यही कारण है कि मेरा तो पुत्र लापता हो गया है और तुम्हारे मुंह पर प्रसन्नता दिखाई देती है।

सौत के कथन के उत्तर में तुमने कहा—क्या मैं ऐसा निकृष्ट कार्य कर सकती हू ? क्या तुम्हारा पुत्र मेरा पुत्र नहीं है ?

सौत ने कहा—वास्तव मे तो मेरा पुत्र तुम्हारा पुत्र ही है, लेकिन पुत्र वियोग की जैसी वेदना मेरे दिल मे साथ रही है, वैसी तुम्हारे दिल मे नही तुम्हारे मुख पर प्रसन्नता झलक रही है। यह देखकर मुझे सन्देह होता है कि कहीं तुमने ही तो मेरे पुत्र को नही छिपा दिया है।

अजना ! सौत की बात सुनकर तुमने कहा तुम्हारा खयाल गलत है। तुमने मुझ पर झूठा आरोप लगाया है।

ईर्ष्या करने पर जीवन मे असत्य का प्रवेश हुए बिना नही रहता। एक पाप करने पर अनेक पाप करने पडते हैं। इस कथन के अनुसार अजना ने पुत्र को छिपाने का एक बुरा काम तो किया ही था, फिर पूछने पर झूठ बोल कर दूसरा पाप किया है। इस प्रकार एक पाप से अनेक पापो की परम्परा चल पडती है।

पुत्र–वियोग की व्यथा से व्यथित होकर सौत लगातार विलाप करती रहती थी। उसको यह करुणापूर्ण दशा देखकर पडौस मे रहने वाली एक स्त्री को दया आ गई। उसने तुम्हे बहुत समझाया और कहा तुम यह क्या कर रही हो ? देखो तो बेचारी कैसा करुण विलाप कर रही है ? इस प्रकार पुत्र को छिपा रखना उचित नही है।

पडौसी स्त्री के इस प्रकार समझाने-बुझाने से तुम समझ गई। वालक को वाईस घडी तक छिपा रखने के वाद तुमने वतला दिया। पूर्वभव मे यह पाप करने का ही परिणाम है कि तुम्हे इस भव मे दुःख भोगना पड रहा है।

मुनि द्वारा कहा हुआ अपना पूर्व-वृत्तान्त सुनकर अंजना ने मुनि को प्रणाम किया। फिर हाथ जोडकर वह पूछने लगी आप जैसे भूतकाल की बाते जानते हैं उस प्रकार भविष्य काल की वाते भी जानते हैं। कृपा करके वतलाइये कि मुझे इस स्थिति मे कितने समय तक रहना पडेगा? मेरी इस अवस्था का अन्त आयेगा भी या नही?

महात्मा वोले— अव थोडे ही समय मे तुम्हारे वे कर्म नष्ट होने वाले है। उसी समय तुम्हारी स्थिति वदल जायेगी। तुम्हे एक ऐसे पुत्ररत्न की प्राप्ति होगी जो अत्यन्त प्रतापी होगा। वह वडा होने पर राम का दूत वनेगा और सीता की खोज करेगा।

महात्मा की भविष्य वाणी सुनकर अजना को वहुत प्रसन्नता हुई। अजना ने उन्हे वन्दन-नमस्कार किया। तत्पश्चात् वह अपनी सखी के साथ उठकर वहा से रवाना हो गई।

अजना को अत्यन्त प्रसन्न देख कर वसन्तमाला ने कहा - कि इन महात्मा से तुम्हे ऐसा क्या मिल गया है कि तुम्हारी प्रसन्नता दिल के भीतर नही समाती?

अजना - इन महात्मा से मुझे जाज्वल्यमान ज्ञान की प्राप्ति हुई है। इसी कारण मुझे वडी प्रसन्नता है।

महात्माओ के पास से ज्ञान की ही प्राप्ति होती है। श्री भगवती सूत्र मे इस विषय मे भगवान् से यह प्रश्न पूछा गया है—

प्र०—तहारूवाण समणाण निग्गथाण पज्जुवासणाए कि फल ?

उत्तर—सवणफल ।

अर्थात्—भगवन् ! सच्चे निर्ग्रन्थ श्रमण की उपासना-सेवा करने से क्या लाभ होता है ? इस प्रश्न के उत्तर मे भगवान् ने कहा साधु की सेवा करने से श्रवण का लाभ होता है अर्थात् श्रुतज्ञान की प्राप्ति होती है ।

सती अजना ने वसन्तमाला से कहा—सखी ! मुझे भी श्रुतज्ञान का लाभ हुआ है । मैं अपने कर्मों को परोक्ष रूप से ही जानती थी, इन महात्मा ने मेरे कर्मों को प्रत्यक्ष देखकर मुझे उनसे परिचित कराया है । यही नही, भविष्य सम्बन्धी बाते, जिनका मुझे कोई ज्ञान नही था, इन महात्मा के मुख से ही मैं जान सकी हू । महात्मा की प्रामाणिक वाणी श्रवण कर मैं समझती हू कि अब शीघ्र ही मेरे दु:खो का अन्त आने वाला है ।

वसन्तमाला—कौन जाने दु:खो का अन्त आयगा या नही ?

अजना मुझे महात्मा की वाणी पर पूरा विश्वास है । उन्होने पति के सम्बन्ध मे जो कुछ कहा है, उस पर भी मुझे विश्वास है और पुत्र के सम्बन्ध मे कही हुई बातो पर भी ।

वसन्तमाला - भविष्य की बात इस समय कैसे कही जा सकती है ? कौन कह सकता है कि तुम्हारी कूख से पुत्र ही होगा और पुत्री नही होगी ?

अजना—यह हो नही सकता। महात्मा के कथन पर मुझे पूर्ण विश्वास है। मेरी अपनी मान्यता है कि मैं पुत्र को ही जन्म दूगी।

ऊपर जो घटना दिखलाई गई है, उसके आधार पर एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित होता है उन महात्मा ने अंजना का भविष्य वतलाया है। पर क्या साधु-महात्मा, लोगो को इस प्रकार भविष्य वतला सकते हैं ? भविष्य-वाणी करना क्या साधुओ के लिए निषिद्ध नही है ? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि शास्त्र मे पाच प्रकार के व्यवहार वतलाये गये है। आगम व्यवहारी साधु के लिये इस प्रकार का भविष्य वतलाना निषिद्ध नही है। हां, सूत्रव्यवहारी साधु ऐसा नही कर सकते।

जैसे भविष्य-भाषण के विषय मे प्रश्न उपस्थित होता है, उसी प्रकार उनके अकेले विचरने के विषय मे भी प्रश्न उपस्थित हो सकता है। वह महात्मा अकेले क्यो विहार करते थे ? इस प्रश्न का भी यही उत्तर है कि यह आगम विहारी थे। उन्हे अकेले विचरने का अधिकार था। सूत्रव्यवहारी साधु उनका अनुकरण नही कर सकते।

काली रानी ने भगवान् महावीर से प्रश्न पूछा था कि मेरे देश पुत्र युद्ध करने गये हैं। मैं उन्हे फिर देख सकूगी या नही ? इस प्रश्न के उत्तर मे भगवान् ने कहा

था—तुम कालीकुमार को नही देख सकोगी। भगवान् का उत्तर सुनकर काली रानी मूर्छित होकर धरती पर गिर पड़ी थी।

यहा विचारणीय बात है कि भगवान् ने इस प्रकार का भावी कथन क्यो किया? इससे नही समझा जा सकता है कि आगमविहारी जो कुछ करते हैं, उसे देखकर सूत्रविहारी उन्ही के अनुसार सब कुछ नही कर सकते। आगमव्यवहारी केवली सरीखे होते हैं। अगर कोई सूत्रव्यवहारी साधु ज्योतिष आदि सीख कर और आगम व्यवहारी का अनुकरण करके भविष्य बतलाने लगे तो वह अनुचित होगा और साधुओं के द्वारा भविष्य जानने के लिये तुम्हारा प्रयत्व करना भी अनुचित होगा। आज का यति समाज किसी समय पाच महाव्रतधारी साधु-समाज ही था, मगर ऐसे-ऐसे कारणो से ही उसका पतन हो गया।

कहने का आशय यह है कि आगमव्यवहारी साधु भविष्य आदि का कथन करते है, इस अधिचार को प्राप्त करने के लिये और उनका अनुकरण करने के लिये उन्ही के समान कर्मो को नष्ट करने का प्रयत्न करना चाहिये। कर्मों को नष्ट करने के लिये उन सरीखा प्रयत्न किया नही जा सकता तो फिर उनके समान भविष्य-भाषण का अधिकार कैसे प्राप्त किया जा सकता है? जो साधु केवल भविष्य बतलाने मे ही आगमव्यवहारी साधुओ का अनुकरण करना चाहते हैं, वे अवश्य ही पतित हो जाते है। वे महात्मा जघाचरण, विद्याचरण आदि विद्याओ से युक्त होने के साथ ही साथ आगमव्यवहारी भी थे, अतएव सूत्रधारी साधु उनका अनुकरण नही कर सकते।

१४ : हनुमान का जन्म

अजना और वसन्तमाला मे यह बातचीत हो ही रही थी कि इतने मे ही अजना को ऐसा जान पड़ा मानो प्रसव-वेदना हो रही हो। अजना ने वसन्तमाला से कह– सखी, मुझे किसी सुरक्षित जगह ले चलो। मुझे प्रसव–वेदना सी मालूम होती है।

वसन्तमाल– सखी, इस सुनसान जगल मे कहा ले चलूं ?

अंजना—सकट के समय साहस का त्याग मत करो। सामने वह पर्वत दिखाई देता है न, उसी पर्वती की गुफा मे मुझे ले चलो।

अजना और वसन्तमाला पर्वत की गुफा के पास पहुंची तो देखती क्या है कि गुफा मे एक विकराल सिह मुंह फाडे वैठा है! सिह को देखते ही वसन्तमाला के होश उड गये। अजना ने उसे धीरज देते हुए कहा– घबराने से कुछ भी लाभ नही होगा। सकट के समय धीरज रखना चाहिये। महात्मा के कथनानुसार मेरी कूख से परम प्रतापी पुत्र उत्पन्न होगा और उसकी रक्षा भी अवश्य ही होगी! जब वालक की रक्षा होने वाली है तो क्या उसे गर्भ मे धारण करने वाली की रक्षा नही होगी।

दैव योग से सिह इस वीच उठा और लीली करता हुआ कही अन्यत्र चला गया। अजना ने सिह की उसी गुफा मे तेजस्वी वालक को जन्म दिया। सद्यसजात शिशु के मुख-मण्डल पर अनोखी आभा देखकर अजना निहाल हो गई।

उसने वसन्तमाला से कहा—देख तो सही, यह बालक कितना तेजस्वी है !

वसन्तमाला भी इस समय हर्ष-विभोर हो रही थी। उसने बडे ही चाव से बालक की ओर देखकर कहा—बालक के पिता यहा होते तो इसका जन्मोत्सव कैसे ठाठ से मनाया जाता ! लेकिन यह निर्जन वन मे जन्मा है।

अ जना—तू इसे दु ख का कारण समझ रही है, यह तेरी भूल है सखी ! इसके वन मे जन्म लेने का अवश्य ही कोई रहस्यपूर्ण कारण होना चाहिये।

अब अ जना मन ही मन चिन्ता करने लगी कि बालक की रक्षा किस प्रकार की जाय ? अ जना इसी चिन्ता मे डूबी थी कि इसी समय विमान के घटे का शब्द उसके कानो मे आ पडा। अचानक यह शब्द सुनकर वसन्तमाला गुफा से बाहर निकली। उसने देखा, विमान इसी ओर चला आ रहा है। वसन्तमाला ने अ जना से कहा, अ जना भी चकित भाव से विमान की ओर देखने लगी। विमान तब तक और भी समीप आ पहुचा था। धीरे-धीरे विमान गुफा के पास आकर ठहर गया। विमान मे से एक भद्र पुरुष बाहर निकले और वह अ जना की ओर आगे बढने लगे।

एक अपरिचित पुरुष को अपने समीप आते देखकर अ जना सोचने लगी - यह नई विपदा फिर कहा से आ पडी।

इसी समय वह भद्र पुरुष अंजना के समीप आ पहुचे। अ जना की व्यग्रता देख उन्होने कहा - बेटी, मैं कोई पराया नही, तेरा मामा हनुमतपाटन का स्वामी हू। मुझे ज्ञात

हुआ कि तुम्हे पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई है, इसलिये मैं तुम्हे लेने के लिये ही यहा आया हू। चलो, मेरे साथ विमान में बैठकर चलो।

अ जना अपने मामा को पहचान गई। फिर भी वह कहने लगी – मामा आपके स्नेह के लिए मैं अनुगृहीत हू। लेकिन इस वन मे मैं वहुत आनन्द मे हू।

अंजना ने अपना पिछला सारा वृत्तान्त कह सुनाया कि किस प्रकार मुनि के दर्शन हुए और किस प्रकार मुनि ने भूत और भविष्य का वृत्तान्त वतलाया। यह सव बातें सुनकर अंजना के मामा अत्यन्त प्रसन्न हुए। उन्होने अपने घर चलने का आग्रह किया।

आखिर अंजना अपने मामा के प्रवल आग्रह को टाल नही सकी। तव वह वसन्तमाला के साथ वालक को गोद मे लेकर विमान मे वैठी और विमान हनुमतपाटन की ओर रवाना हुआ। रास्ते मे अंजना अपनी सखी के साथ धर्म की महिमा के विषय मे बातें करती चली जा रही थी। अचानक वालक विमान को देखकर और विमान के घण्टे की आवाज सुनकर खिलखिला कर हंसा और उछलने लगा। अ जना ने उसे उछलने से रोकने का वहुत प्रयत्न किया मगर उसने एक ऐसी उछाल मारी कि वह विमान के वाहर ही गया और देखते-देखते नीचे पर्वत के शिखर पर जा पडा।

जो अ जना भयानक से भयानक कष्ट आने पर भी पर्व की तरह अकम्प रही थी, उसका हृदय भय और आशंका से काप उठा। उसके दु ख का पार न रहा। उसके मुंह

से एक आर्त्त चीख निकल पडी—हाय ! मेरे बेटे की क्या गति हुई होगी ! आह ! यह विमान मेरे लिये तो विष के समान सिद्ध हुआ ! अजना के मामा के दुःख का भी क्या पूछना। फिर भी उसने अंजना को सान्त्वना देते हुए कहा—बेटी ! तू धर्म को जानती है फिर भी इतना बिलख रही है ! इस तरह बिलखने और दुःख मानने से कोई लाभ नही हो सकता ! रोओ मत। मैं अभी जाकर बालक की जाच करता हू।

इस प्रकार अजना को सान्त्वना देकर और विमान को किसी उपयुक्त स्थान पर उतार कर अजना के मामा बालक को देखने गये। मामा जब बालक के पास पहुचे तो उनके आश्चर्य का पार न रहा। उन्होने देखा—बालक एक शिला पर पडा-पडा मुस्करा रहा है। जिस शिला पर बालक पडा था, वह टूट गई। मामा ने बडी प्रसन्नता से साथ बालक को उठाकर गले लगा लिया। वह उसे अजना के पास ले आये और उसे सौंपते हुए बोले—तुम्हारे बालक को भला कौन मार सकता है ? महात्माओ के कथनानुसार यह तो धर्म-सहायक बनेगा, सीताजी की खोज करने वाला वज्र-अगी राम-दूत होगा।

जिन लोगो की धर्म पर श्रद्धा नही है, वे कथा के इस अश को कपोलकल्पित कहेगे। उनके खयाल से ऐसी बाते सिर्फ कहने भर के लिये हैं। सच्चाई के साथ इनका कोई सरोकार नही है। लेकिन धर्म पर आस्था रखने वाले लोग कहेगे कि जिन माता-पिता ने बाईस वर्ष पर्यन्त अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन किया हो, उनका पुत्र अगर इतना तेजस्वी

और पराक्रमी हो तो इसमे अचरज ही क्या है ? इस तरह जिन्हे धर्म पर विश्वास है, उन्हे इस घटना से कोई चमत्कार या आश्चर्य नही जान पड़ेगा ।

इस घटना के आधार पर कोई अपने पुत्र की इसी तरह परीक्षा करना चाहेगा तो वह बुद्धिमान् नही कहलाएगा। ऐसे लोगो को पुत्र की परीक्षा करने से पहले अपने ब्रह्मचर्य की परीक्षा करनी चाहिये ।

अहमदनगर मे प्रोफेसर राममूर्ति मुझसे मिले थे। वह कहते थे—पाच वर्ष का कोई बालक मेरे सुपुर्द कर दिया जाय और वह मेरे निर्देश के अनुसार चले तो मैं बीस वर्ष की उम्र मे ही उसे अपने समान दृढशरीरी बना सकता हू। इस तरह जब बाह्य प्रयोग के द्वारा भी दृढशरीरी बनाया जा सकता है तो ब्रह्मचर्य के प्रयोग से सकल्प के अनुसार सिद्ध होने मे आश्चर्य ही क्या है ? ब्रह्मचर्य में असीम शक्ति है । इसी प्रकार धर्म-शक्ति भी कुछ कम नही है। धर्म की शक्ति से शरीर मे भी कचास नही रह पाती।

कौन ऐसा अभागा होगा जो स्वस्थ और सुन्दर सन्तान की अभिलाषा न रखता हो ? परन्तु इस अभिलाषा को सफल बनाने के लिये धर्म और ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले कितने मिलेगे ? आज अ जना नही है, पवनकुमार नही है और हनुमान भी नही है। फिर भी जिस धर्म की शक्ति उनमे थी, वह धर्म तो आज भी मौजूद है अतएव धर्म को अधिक से अधिक अपने जीवन मे कार्यान्वित करना चाहिये । धर्म के पालन से ही कल्याण हो सकता है ।

राजकुमारी होने पर भी अ जना के पास कुछ नही

बचा था। लेकिन उनके पास एक प्रभावशाली वस्तु थी जिसे चरित्रबल कहते हैं। चरित्रबल के प्रभाव से उसे सभी कुछ वापिस मिल गया और उसके सकट भी टल गये। चरित्रबल का ऐसा प्रभाव है। अतएव हमे भी चरित्रबल प्राप्त करना चाहिये, उसे विकसित करना चाहिए और उसकी रक्षा करनी चाहिए। चारित्रबल से इस लोक मे भी कल्याण होता है और परलोक मे भी। चरित्रबल से ही आत्मा बलवान् बनती हैं और चरित्रबल से ही आत्मा का उत्थान होता है। चरित्रबल के नाश से आत्मा का पतन होता है जिसमे चरित्रबल नही है, वह मनुष्य आत्मा का उत्थान या कल्याण नही कर सकता। इसी अभिप्राय से उपनिषद् मे कहा गया है —

नायमात्मा बलहीनेन लभ्य :

अर्थात् जिसमे चरित्र का वल नही है, वह आत्मा को—अपने शुद्ध स्वरूप को प्राप्त नही कर सकता।

उपनिषद् के इस वाक्य का आशय यह है कि जिस व्यक्ति मे चरित्र का वल नही है, वह आत्मा का स्वरूप नही समझ सकता और जो आत्मा का स्वरूप ही नही समझ सकता, वह आत्मा का कल्याण कैसे कर सकता है? इसलिये आत्म-कल्याण करने की इच्छा रखने वाले को चरित्रबल प्राप्त करने का प्रयत्न अवश्य करना चाहिए। चारित्रबल की प्राप्ति ही आत्मोत्थान की चावी है।



१५ : मामा के घर पर

अंजना मामा के घर पहुंची। उसकी मामी ने यथोचित सत्कार करके कुशल-क्षेम के समाचार पूछे। अंजना की पिछली जीवन-घटना सुनकर सबको दुःख तो हुआ मगर अन्तत सकुशल घर आ पहुंचने के कारण यह दुःख भी प्रसन्नता मे छिप गया। मामा ने उत्साह और उमंग के साथ बालक का जन्मोत्सव मनाया और उसका नाम हनुमानकुमार रखा गया। यद्यपि अंजना को अपने मामा के घर किसी प्रकार का कष्ट नही था—सब प्रकार का सुख भी था फिर भी उसका हृदय अतीत काल की स्मृतियो के कारण व्यथित रहता था। सर्वथा निष्कलंक होने पर भी सास-ससुर तथा माता-पिता ने उसे कलङ्क लगाया है, यह स्मृति उसे बिच्छू का डंक लगने के समान मालूम होती थी।

अंजना के मुख पर उदासीनता देखकर उसके मामा ने कहा आज सारा नगर तुम्हारे पुत्र के जन्मोत्सव के उपलक्ष्य मे आनन्द मना रहा है और तुम स्वयं ऐसी उदास दिखाई देती हो इसका क्या कारण है? तुमने जिन कष्टों को सहन किया है उनका स्मरण हो आया है अथवा यहां भी कोई कष्ट है?'

अंजना—यहां मुझे किसी बात का कष्ट नही है। मुझे इसके लिये भी दुःख नहीं है कि पहले अनेक कष्ट सहन करने पड़े है क्योंकि मैंने जो कष्ट सहे हैं, उनके बदले में बहुत कुछ पा सकी हूं। मैं वन मे न गई होती तो महात्माजी

के दर्शन करने का लाभ न मिलता और अपने भूत तथा इस जीवन की भावी घटनाओ से भी मैं अज्ञात रह जाती। इस प्रकार, वन मे जो आनन्द मिला है उसके आगे सारे आनन्द तुच्छ प्रतीत होते है। जगल मे तो मेरा मगल ही हुआ है मैं वन का बहुत उपकार मानती हू। इसी प्रकार सास-ससुर और माता-पिता के व्यवहार के कारण भी दु ख नही मानती, क्योकि अगर वे मुझे घर से बाहर न निकालते तो मैं वन के लाभ और आनन्द से वचित रह जाती। इस कारण मैं उन सबका भी उपकार ही मानती हैं।

इसके बाद कुछ रुक कर अजना फिर कहने लगी—मुझे और तो किसी प्रकार का दु ख नही है परन्तु जबसे पति युद्ध मे गये हैं तब से आज तक उनका कुछ भी कुशल-समाचार नही मिला। इसलिये जरूर मेरे चित्त मे उदासी बनी रहती है। वह एक बार आ जाते तो मेरा कलक धुल जाता और दर्शन भी हो जाते।

अ जना के इस कथन के उत्तर मे उसके मामा ने कहा—तुम्हारी बातो मे मुझे तो परस्पर विरोध दिखाई देता है। अभी तो तुमने कहा था कि वन मे जाने पर महात्माजी के द्वारा तुमने अपने जीवन की भूत-भविष्यकाल की घटनाए जानली है। अभी-अभी तुम पवनकुमार के विषय मे चिन्ता प्रकट कर रही हो। जब महात्माजी ने कह दिया है कि पवनकुमार विजयी होकर आयेगे और तुम्हारा मिलाप होगा तो फिर इस प्रकार की चिन्ता क्यो करती हो ?

महात्माजी ने पुत्र के विषय मे जो बात कही थी, उस पर तो तुम्हे विश्वास है, लेकिन पति के विषय मे कही हुई बातो पर सन्देह करती हो। इसका क्या कारण है ?

मामा की बात सुनकर अजना बोली—वास्तव मे मुझे भान ही नही रहा। आपने समय पर चेतावनी देकर मेरा बड़ा हित किया है। अब मैं किसी प्रकार की चिन्ता न करके आनन्दपूर्वक रहूगी।

कभी-कभी महापुरुष भी भ्रमणा मे पड जाते हैं। उस समय उन्हे भी दूसरो की सहायता की आवश्यकता पडती है। इसके बाद अजना शातिपूर्वक मामा के घर रहने लगी।

१६ : अंजना की खोज

अब जरा पवनकुमार की ओर ध्यान दीजिये। इधर जब अंजना अनेक कल्पित घटनाओ के चक्र मे पडी घूम रही थी, तब पवनकुमार भी अनेक नवीन-नवीन परिस्थितियो मे से गुजर रहे थे। दोनो ओर साथ ही साथ घटना चक्र घूम रहा था। लेकिन एक साथ घटने वाली दो घटनाओ का वर्णन समाप्त होने पर ही दूसरे के विषय मे कहा जा सकता है। अतएव अब यह देखना है कि पवनकुमार ने अजना के महल मे से निकलने के बाद क्या-क्या किया।

अंजना के महल मे से निकल कर पवनकुमार राजा रावण के साथ युद्ध-क्षेत्र के लिए रवाना हुआ। पवनकुमार को देखकर रावण ने कहा - राजा प्रह्लाद स्वय नही आये। उन्होने अपने बदले अपने पुत्र को भेजा है।

रावण के मन्त्री ने कहा—जब पुत्र योग्य हो गया हो तो पिता को युद्ध के लिए आने की क्या आवश्यकता है?

रावण - तुम्हारी बात सही है, लेकिन पवनकुमार क्या वरुण पर विजय प्राप्त कर सकेगा?

मन्त्री—महाराज ! राजा प्रह्लाद को अपने पुत्र पर भरोसा न होता तो वे उसे भेजते ही क्यो ? जब उन्होंने भेजा है तो अवश्य ही उन्हे अपने पुत्र के युद्ध-कौशल पर विश्वास होगा ।

रावण—ठीक है । पवनकुमार कितना पराक्रमी है, सो अभी युद्ध–क्षेत्र मे मालूम हो जायगा ।

पवनकुमार ने रावण की ओर से वरुण के साथ युद्ध किया । युद्ध मे पवनकुमार को विजय प्राप्त हुई । खरदूपण को वन्धनमुक्त करके वह रावण के पास ले आया । पवन-कुमार की विजय और खरदूपण की मुक्ति मे रावण बहुत प्रसन्न हुआ । वह पवनकुमार के पराक्रम प्रशसा करने लगा—उसने पवनकुमार का खूब आदर-सत्कार किया, उसे पुरस्कार दिया ।

पवनकुमार विजय प्राप्त करने के बाद रावण द्वारा किये हुए सत्कार और पुरस्कार को शिरोधार्य करके वहां रहा अवश्य लेकिन उसका चित्त उस समय भी अंजना में ही लगा था । भक्ति मे बडा वल है । भक्ति के बल के कारण ही सग्राम के अवसर पर भी पुरुष का चित्त अपनी पत्नी की ओर आकर्पित होता रहता है । इसी प्रकार अगर परमात्मा के प्रति विनम्र भक्तिभाव रखा जाय तो तुम्हारा चित्त परमात्मा मे लीन हुए विना नही रह सकता । अनन्त शक्तियो के तेजस्वी पुन्ज परमात्मा के आगे निर्वल वनने से आत्मा को ईश्वरीय वल प्राप्त होता है । जो परमात्मा के आगे निर्वल वन जाता है और ससार सम्वन्धी वलो का आसरा छोड देता है, उसी को दैवी वल प्राप्त होता है ।

पवनकुमार का चित्त अंजना में ही लगा था। वह यही सोचा करता कि मैं उस सती से कब मिल सकूंगा? बाईस वर्ष तक मैंने उस पतिव्रता को अनेक कष्ट दिये हैं। युद्ध के लिये रवाना होते समय भी मैंने उसका तिरस्कार किया था। लेकिन धन्य वही सती, जिसने अपने मन में लेश मात्र भी दुर्भाव नही आने दिया और अपने निश्चय पर अटल रही। मैं इतना दुर्व्यवहार करने के बाद जब उसके पास गया तो उसने मुझे अपराधी नही माना और अपने आपको ही अपराधी समझा। सचमुच वह सती अपनी जीवन-परीक्षा मे उत्तीर्ण हुई है। मैंने जब उससे विदाई ली तो उसने कहा था – "मुझे कही कष्ट मे न पडना पडे, अतएव अपने मिलने की साक्षी-स्वरूप कुछ न कुछ देते जाइये।" कही ऐसा न हो कि सती की आशका सत्य सिद्ध हो जाय! मेरी माता का स्वरूप है भी कठोर। मैं जब तक सती के कुशल–समाचार न जान लूं, तब तक सुखी और सन्तुष्ट कैसे हो सकता हूं?

रावण के यहा कुछ दिन ठहरने के बाद पवनकुमार अंजना से मिलने की भावना करते हुए अपने घर के लिये रवाना हुआ। राजा प्रह्लाद को मालूम हुआ कि पवनकुमार युद्ध-मे विजय प्राप्त करके घर आ रहा है। यह सुखद समाचार सुनकर राजा को अत्यन्त हर्ष हुआ। पवनकुमार का विजय स्वागत करने के लिए सारा नगर सजाया गया। पवनकुमार ने अत्यन्त हर्ष और उत्कठा के साथ नगर मे प्रवेश किया।

राज महल मे आने पर पवनकुमार ने माता-पिता को प्रणाम किया और उसने कुशल समाचार पूछे। इसके बाद

सब गुरुजनो से आशीर्वाद लेकर वह अंजना से मिलने के लिये अपने महल मे चले गये। किसी को साहस ही न हुआ कि अजना के सम्बन्ध का वृत्तान्त पवनकुमार के कानो तक पहुंचा दे।

अंजना के महल मे प्रवेश करने हुए पवनकुमार ने अपने मित्र प्रहस्त से कहा भाई ! हम लोग उस रात्रि में जब इस महल मे आये थे तो यह कितना सुहावना लगता था। आज वैसा नही लग रहा है। जान पडता है अजना महल मे नही है। अजना महल मे होती तो उसकी सखी वसन्तमाला अवश्य दिखाई देती। अजना–विहीन यह महल जलरहित सरोवर के समान या प्राणशून्य देह के समान जान पडता है।

प्रहस्त –मैं आगे चलकर तलाश करता हू कि अंजना महल मे है या नही ?

यह कहकर प्रहस्त ने कदम बढाये। वह महल मे पहुचा। पर अजना के होने का कोई चिह्न उसे दृष्टिगोचर न हुआ। तब तक पवनकुमार भी वहा आ पहुचे थे। उनके आते ही प्रहस्त ने कहा—महल मे अजना तो है ही नही।

वहा मौजूद दास दासियो से अजना के विषय मे पूछताछ की गई। एक दासी ने बतलाया—'आपके चले जाने के बाद अजना देवी गर्भवती हो गई थी। आपकी माताजी को सन्देह हुआ कि यह गर्भ मेरे पुत्र का नही है। इसी आधार पर उन्हे घर से निकाल दिया गया क्योकि उन्हे घर मे रखने से कुल को कलक लगने की तथा निन्दा होने की सम्भावना थी।"

दासी के ये वचन पवनकुमार के हृदय मे विषैले

वाण की तरह चुभ गये । उन्हे कितनी व्यथा और कितनी वेदना हुई होगी, इसका अनुमान करना भी कठिन है । वह बोले - घोर अनर्थ हो गया ! मुझसे बडी भूल हुई कि मैंने माताजी से नही कह दिया कि मैं अंजना से मिल चुका हू । मेरे इस भूल का ही दुष्परिणाम है। लेकिन माताजी को मेरे आने की प्रतीक्षा तो करनी चाहिये थी । मेरे लौटने तक तो धीरज रखना था । मैं क्या सदा के लिये चला गया था ?

प्रहस्त वोला—जव कुल को कलंक लगने का भय हो और क्रोध चढ आया हो धैर्य कैसे रह सकता है ।

पवनकुमार -तुम्हारी वात भी ठीक है । मेरी भूल के कारण ही एक सती कलंकित समझी गई और घर से निकाली गई है ! उस सती ने जो आशंका की थी वह आखिर सच ही निकली ।

पवनकुमार ने प्रहस्त से कहा अंजना कदाचित् मायके गई हो । हम लोग महेन्द्रपुर चले ।

प्रहस्त - महेन्द्रपुर जाने से पहले माता-पिता को वतला देना उचित होगी ।

पवन० ठीक है तुम खवर दे आना ।

पवनकुमार और प्रहस्त महेन्द्रपुर जाने के लिये रवाना हुए । राजा महेन्द्र को मालूम हुआ कि पवनकुमार अंजना की खोज करने के लिये आ रहे है । उन्होंने नगर को सजाकर पवनकुमार का खूब स्वागत किया । मगर यह दुविधा उनके हृदय मे शल्य की भाति चुभ रही थी कि

अजना के विषय मे पूछे हुए प्रश्नो का इन्हे क्या उत्तर दिया जायगा? इधर अजना की माता भी अजना को आश्रय न देने के लिये घोर पश्चात्ताप कर रही थी।

ससुराल मे जिस ढग से उनका स्वागत किया गया, उससे पवनकुमार को आशा बन्ध गई कि अजना यही होनी चाहिये। जब वह भोजन करने बैठे, तब भी उनकी यही धारणा थी। लेकिन जब भोजन सामग्री से सुशोभित थाल उनके सामने आये तो पवनकुमार ने प्रहस्त से कहा—'मित्र! हम लोग भोजन करने और मजा-मौज लूटने आये हैं या अजना की खोज करने? मुझे तो ऐसा जान पडता है कि अजना यहा भी नही है कदाचित् अजना न दिखाई देती तो अजना का छोटा-सा शिशु तो नजर आता ही। कदाचित् वह भी नजर न आता तो अजना की सखी वसन्तमाला नजर आती। मगर वहा तो इनमे मे कोई भी नही दिखता। इससे अनुमान होता है कि अजना यहा नही है।

प्रहस्त—आपका कहना यथार्थ है। हम लोग जिस काम के लिये निकले है, वह पहले करना चाहिये। पहले अजना देवी की तलाश और फिर भोजन करना चाहिये। जब भी कृष्ण दुर्योधन के घर गये थे तो दुर्योधन ने उन्हे अपने पक्ष मे रखने के लिये भोजन आदि की बडी-बड़ी तैयारिया की थी मगर श्री कृष्ण ने उन तैयारियो पर तनिक भी ध्यान न देते हुए यही कहा था कि मैं जिस काम के लिये आया हू, सबसे पहले यही काम करूगा। उसके बाद भोजनादि के काम निवटाऊगा। दुर्योधन ने आग्रह किया कि पहले भोजन तो कर लीजिये, फिर काम तो है

ही परन्तु नीति-निपुण श्री कृष्ण ने उत्तर दिया—मैं यहां भोजन करने नही आया हूं, कार्य के लिये यहा आया हू। अतएव मुझे सबसे पहले वही काम करना चाहिये, जिसके लिए मैं आया हू।

प्रहस्त ने भी पवनकुमार का समर्थन करते हुए यही कहा कि हमे सर्वप्रथम अंजना देवी की खोज करनी चाहिये और उसके बाद भोजन करना चाहिये।

प्रहस्त—यह कह ही रहे थे कि उसी समय पवनकुमार के साले की लडकी वहा आ पहुची। पवनकुमार ने प्रेम से उसे अपने पास बुलाया और पूछा बिटिया तुम्हारी बुआ (फूफी) कहा है ? उसने कहा -मेरी फूफी तो कलक लगाकर आई थी, इसलिये मेरे पिताजी तथा दादाजी वगैरह ने उन्हे यहा नही रहने दिया।

यह समाचार सुनकर पवनकुमार को बहुत दु.ख हुआ। ऐसी दु खमय स्थिति मे उन्हे भोजन भाता ही कैसे ? पवन-कुमार ने मित्र से कहा—अब यहा रहने मे कोई सार नही है। चलो यहा से जल्दी चल दे। जिस घर मे मेरी पत्नी को और उनकी पुत्री को आश्रय नही मिला, उस घर मे मैं भोजन कैसे कर सकता हू ? जब मैं अंजना की खोज के लिये ही निकला हू तो फिर यहा भोजन कैसे कर सकता हूं ? मैं जानता हू कि अंजना को आश्रय न देने के लिये मेरे ससुर आदि दोषी नही हैं। दोष तो मेरा ही है कि मैंने अंजना के विषय मे अपनी माता को कोई सूचना ही नही दी। मेरे इस दोष के कारण ही अंजना को इतने सकट सहने पडे हैं, जब तक अंजना का पता न लगे।

तब तक भोजन न करने के निश्चय पर मुझे अटल रहना चाहिये ।

इस प्रकार विचार कर पवनकुमार और प्रहस्त भोजन को हाथ जोड कर उठ बैठे । उन्होने भोजन नही किया । सास-ससुर ने भोजन करने के लिये बहुत आग्रह किया । उन्होने अपनी भूल स्वीकार की और पश्चात्ताप भी किया । लेकिन पवनकुमार अपने इस निश्चय पर डटे रहे कि जब तक अ जना का पता नही लगेगा मैं भोजन नही करूंगा ।

राणा प्रताप ने भी प्रतिज्ञा की थी कि जब तक चित्तौड़ का किला बादशाह से नही जीत लू गा, तब तक मैं राजमहल में नही रहूगा । इस प्रतिज्ञा का पालन करने के लिये वह जगल मे ही रहते थे । आमेर के राजा मानसिह ने सुना कि राणाप्रताप स्वदेश-रक्षा के लिये जगल मे रहते है तो उनके हृदय मे राणाप्रताप के प्रति सम्मान का भाव उत्पन्न हुआ । राजपूतो के मस्तक को उन्नत रखने वाले राणा से मिलने का उन्होने निश्चय किया । उस समय राजा मानसिह, बादशाह अकबर की तरफ से युद्ध करने के लिये दक्षिण देश मे गये थे । दक्षिण से लौटते हुए वह राणा से मिलने गये । राणाप्रताप ने उनके लिये भोजन आदि की व्यवस्था करवाई, किन्तु मानसिह का भोजन-सत्कार करने के लिये वे स्वय नही गये । उन्होंने अपने पुत्र को भेज दिया । राजा मानसिह ने राणा के पुत्र अमरसिह से पूछा क्यो, राणा नही आये ?

अमर०—उनके बदले मैं आया हू ।

मानसिह– मै यहा भोजन करने नही आया हू । मैं

राणा से मिलने आया हू ।

उसी समय राणा ने आकर कहा—जिसने राजपूत होकर एक मुसलमान बादशाह को अपनी वहिन और फूफी व्याह दी है, और जिसने क्षत्रियत्व को कलक लगाया है, उसके साथ मैं भोजन कैसे कर सकता हू ?

मानसिह इस अपमान से एकदम क्रुद्ध हो गये। क्रोध के आवेश मे उन्होने कहा—इस अपमान का बदला चुकाया जायगा ।

राणा—अपमान का बदला लेने के लिये आप स्वय आना और अपने वहनोई को साथ लेते आना ।

राजा मानसिह दात पीसते हुए वहा से रवाना हो गये । उन्होने राणा के घर भोजन नही किया । दिल्ली पहुचकर वादशाह से सारा वृत्तान्त कहा । उसके फलस्वरूप हल्दी घाटी का भीष्ण युद्ध हुआ ।

पवनकुमार की सास ने और ससुर ने वहुत कुछ समझाया पर पवनकुमार ने भोजन नही किया । सास-ससुर समझ गये अव पवनकुमार को भोजन के लिए बाध्य नही किया जा सकता । पवनकुमार क्षत्रिय वीर हैं उन्होने जो प्रतिज्ञा ले ली है उसका पालन किये विना वे नही रहेगे ।

महेन्द्र ने लज्जित भाव से उत्तर दिया—अजना किस ओर गई है, इस वात पर हमने कभी ध्यान ही नही दिया ।

पवनकुमार और प्रहस्त ने वन की ओर गमन किया । प्रहस्त ने निर्जन वन मे पहुच कर कहा इस सुनसान वन

हम लोग कहा जाएंगे ? यहा कोई पुरुष भी तो दिखलाई नही देता । ऐसी स्थिति मे अकेली स्त्रिया यहा कैसे रह सकती हैं ?

पवनकुमार ने कहा—कुछ भी हो, अपने को तो अजना का पता लगाना है। मेरी यह प्रतिज्ञा अटल है—"कार्यं वा साधयामि शरीर वा पातयामी" अर्थात् या तो कार्य सिद्ध कर लूंगा या फिर शरीर का त्याग कर दूंगा।

दोनों मित्र आगे बढते गये । प्रहस्त को पवनकुमार की प्रतिज्ञा के कारण बडी चिन्ता हो गई थी । काफी आगे बढ जाने पर भी जब किसी मनुष्य का दर्शन वहा न हुआ तो पवनकुमार के दिल मे निराशा-सी उत्पन्न होने लगी । प्रहस्त ने उन्हे सान्त्वना देते हुए कहा—आप धीरज न त्यागे। हम लोग पुरुष हैं तो अजना देवी की खोज करने मे हमे पुरुषार्थ करना ही चाहिये ।

प्रहस्त के प्रेरक वचन सुनकर पवनकुमार ने कहा—मित्र ! इस सकट के समय तुम मेरी बहुमूल्य सहायता कर रहे हो और मेरे साथ-साथ कितने ही कष्ट सहन कर रहे हो। मैं तुम्हारा बहुत ऋणी हू। मित्र हो तो ऐसा ही हो।

सम्भव था कि पवनकुमार के प्रशसात्मक वचन सुनकर प्रहस्त को अभिमान हो आता लेकिन उसके हृदय मे लेश-मात्र भी अभिमान उत्पन्न नही हुआ । उसने सरलतापूर्वक यही उत्तर दिया-जब वसन्तमाला स्त्री होकर भी अजना देवी की इतनी सेवा कर रही है तो मैं पुरुष होकर आपकी थोडी-सी सेवा करू तो कौन बडी बात हुई ? मैं

तो अपने कर्त्तव्य का ही पालन कर रहा हूं। इस विषय मे आप मेरा उपकार मानने का कष्ट न कीजिये।

दोनो मित्रो ने वन से अंजना की खूब खोज की पर कही पता नही चला। अन्त मे पवनकुमार ने कहा—मित्र, मुझे तो ऐसा जान पडता है कि अंजना अगर इस वन मे आई होगी तो जीवित ही नही रही होगी। या तो वह सिंह या बाघ आदि हिंसक पशुओ का आहार बन गई होगी या उसने स्वेच्छा से ही शरीर तज दिया होगा। ऐसी दशा मे अब मेरा भी जीवित रहना व्यर्थ है। जब अंजना ही जीवित नहीं रही तो फिर मैं भी कैसे जीवित रह सकता हू? मित्र, तुम पिताजी के पास जाओ और उनसे कह देना—पवनकुमार अब इस ससार मे नही है। जैसे आपने अंजना का मोह छोड़ दिया है, उसी प्रकार पवन का भी मोह छोड दीजिये।

पवनकुमार का यह निराशाजनक कथन सुनकर प्रहस्त ने कहा मित्र! आपको इस प्रकार कायर नही होना चाहिए। धीरज धरो हिम्मत रखो। सब ठीक ही होगा। अपघात करने से कोई लाभ नही। इसके अतिरिक्त यह मान लेने का भी कोई कारण नही कि अंजना देवी जीवित नही। सम्भव है वह जीवित हो और कही आपकी प्रतिक्षा कर रही हो। अगर वह जीवित होगी तो आपके अपघात करने के बाद उनकी क्या स्थिति होगी।

पवनकुमार—बात तुम्हारी यथार्थ है पर इस भयंकर जंगल मे उसका जीवित रहना कठिन है।

प्रहस्त इस सम्बन्ध मे अभी निश्चयात्मक कुछ भी

नही कहा जा सकता । सम्भव है, कोई दैवी शक्ति प्रकट हुई हो और उनकी रक्षा भी हो गई हो ! इसलिये आप अपघात करने का विचार एकदम छोड दीजिये । आज्ञा हो तो पिताजी के पास जाकर मैं समाचार कह देता हू । वे आकर जो आज्ञा दे, आप उसका पालन करना ।

पवनकुमार को समझा कर प्रहस्त राजा प्रह्लाद के पास पहुचे । उसने राजा को सब समाचार सुनाये । यह भी कहा कि पवनकुमार निराश होकर अपघात करने के लिए तैयार हैं । आपके पहुचने तक मैं अपघात करने से उन्हे रोक आया हूं । अब आपको जो उचित प्रतीत हो, कीजिये ।

यह दु:खद वृत्तान्त सुनकर राजा और रानी केतुमति के दु ख का पार न रहा । वे कहने लगे—हमारी एक भूल का परिणाम कितना भयकर हो रहा है ! पवनकुमार के आने तक भी अ जना को हमने न रखा और घर से निकाल दिया । इस भूल के कारण ही आज यह दुर्दिन देखना पड रहा है ! इस प्रकार पश्चात्ताप करता हुआ राजा प्रह्लाद प्रहस्त के साथ पवनकुमार के पास जाने को तैयार हुआ । दोनो उसी जगल की ओर रवाना हो गये ।

इधर प्रहस्त के चले जाने के पश्चात पवनकुमार विचारने लगे अपघात करने का यही सबसे अच्छा अवसर है । प्रहस्त के सामने अपघात करना कठिन है । इस समय वह चला गया है । दूसरा देखने व रोकने वाला नही है । इसी मौके पर जीवन का अन्त कर डालना ठीक है । यह सोचकर पवनकुमार जैसे ही अपघात करने का उपक्रम कर रहे थे कि उसी समय राजा प्रह्लाद वहा आ पहुचे ।

पवनकुमार को मरने के लिये तैयार देखकर प्रह्लाद ने कहा–यह क्या कर रहे हो ? क्या औरत के पीछे जान दी जाती है ? अभी तक दुनियां मे "सती" होने की बात सुनी जाती थी, पर तुम "सत्ता" बनने को तैयार हो रहे हो।

पिता का उपालम्भ सुनकर पवनकुमार कुछ क्षण चुप रहे। फिर उदास और गम्भीर भाव से बोले—अंजना साधारण स्त्री नही थी पिताजी ! वह सती थी। आपने जैसे उसका वियोग सह लिया है उसी प्रकार मेरा भी वियोग सह लीजिये। यही मेरी प्रार्थना है।

राजा प्रह्लाद ने जरा गम्भीरता से कहा—बेटा, इस प्रकार अधीर होने से क्या लाभ होगा ? जरा धीरज धरो। वह सती थी तो शील के प्रताप से उसका संकट भी अवश्य टल गया होगा। वह जीती–जागती अपने घर लौटेगी।

पवनकुमार बोले–मैं नही समझता कि वह जीवित रही होगी और उसके विना मैं जीवित नही रह सकता।

प्रहलाद–मगर थोडी प्रतिक्षा करने में हर्ज क्या है ? मैं अभी उसकी खोज करता हू।

राजा प्रहलाद ने चारो ओर अपने नौकर और गुप्तचर भेजे। जिस अंजना को किसी ने क्षण भर भी आश्रय देना उचित न समझा था उसी अंजना की तलाश मे आज राजा प्रहलाद के आदमी चारो दिशाओ मे फैले हुए थे। यह सत्य और शील का ही प्रताप था। वास्तव में सत्य मे महान् शक्ति है। सत्य के प्रताप से भगवान् भी मिल जाते हैं। आज कहा जाता है कि भगवान् कही दृष्टिगोचर नही होते

लेकिन भले ही भगवान् दिखाई न दे मगर सत्य तो दिखाई देता है न ? शास्त्र मे कहा है — "त सच्चं खु भगव ।" अर्थात् सत्य ही भगवान् है । सत्य की आवश्यकता तो नास्तिक भी स्वीकार करते हैं । भूख लगने पर नास्तिक भी "भूख लगी है" इस प्रकार कहकर सत्य ही का सहारा लेते हैं । इस प्रकार जिस सत्य का आस्तिक और नास्तिक—दोनो आश्रय लेते हैं, उसे अपने जीवन मे स्थान देना बडा ही कल्याणकारी है । जीवन मे सत्य की सक्रिय साधना करने से परमात्मा का भी साक्षात्कार होगा ।

१७ : सम्मिलन

आखिर राजा प्रह्लाद का प्रयत्न सफल हुआ । उन्होंने जिन लोगो को अ जना की खोज करने भेजा था, उनमे से एक ने आकर खबर दी अ जना अपने पुत्र के साथ इस समय हनुमतपाटन मे है ।

यह सुखद समाचार सुनकर राजा प्रह्लाद को कितनी प्रसन्नता हुई होगी, यह कौन कह सकता है ? पुत्र के प्राण बचे, पुत्रवधू की पुन प्राप्ति हुई और भी साथ ही पौत्र भी उन्होने पा लिया ! राजा प्रह्लाद को इससे अधिक और क्या आनन्द हो सकता था ।

राजा प्रह्लाद आज अत्यन्त प्रसन्न थे । समाचार पाते ही वे पवनकुमार के पास पहुच कर वे बोले—बेटा, चलो । अ जना का पता लग गया है ।

पवनकुमार सोचने लगे—पिताजी इस नाजुक मौके पर

वनावटी वात नही कह सकते। फिर उनका प्रसन्न वदन ही उनकी वात की सच्चाई का प्रमाण दे रहा है। इस प्रकार विचार कर वह पिता के साथ चलने को तैयार हो गये।

राजा प्रहलाद अपने परिवार के साथ हनुमतपाटन के लिये रवाना हुए। अंजना के मामा शूरसेन को राजा प्रहलाद आदि के समाचार मिले तो अंजना के पास पहुंचे। अंजना को सब समाचार सुनाकर उन्होने कहा तुम्हारे प्रताप से आज प्रहलाद राजा अचानक ही मेरे द्वार पर आ रहे हैं।

अंजना की प्रसन्नता का पार ही नही था उसने कहा—मामा, यह मेरा नही आपका ही प्रताप है। वन मे पहुच कर आपने मेरी रक्षा न की होती तो आज यह सुअवसर ही न मिलता।

मामा ने सन्तोप के साथ कहा—बेटी, यह सब तेरे सतीत्व की महिमा है।

इस प्रकार दोनो एक दूसरे को यश का भागी वनाने लगे। इतने मे वसन्तमाला बीच मे बोल उठी—यह प्रताप तो उन मुनि महात्मा का है जिनके दर्शन वन मे हुए थे। उन महापुरुप का कथन बरावर सत्य सिद्ध हो रहा है।

अंजना और उसके मामा ने वसन्तमाला के कथन का समर्थन किया। सभी मन ही मन महात्मा के प्रति विनीत श्रद्धांजलि अर्पित करने लगे।

राजा शूरसेन ने सारा नगर ध्वजा-पताकाओ से सजाया और राजा प्रहलाद, राजकुमार पवन आदि का वडे ही ठाठ के साथ स्वागत किया।

पवनकुमार मन ही मन सोचने लगे -पिता की आज्ञा मानने से कल्याण होता है, यह शास्त्रवचन वास्तव में सच्चा है । पिता की आज्ञा का उल्लघंन करके मैंने प्राण त्याग दिये होते तो क्या स्थिति होती ?

सब लोग राजा शूरसेन के महल मे आये । अ जना आज खूब प्रसन्न थी । समय पर अ जना और पवनकुमार का मिलन हुआ । दोनो एक दूसरे से प्रगाढ प्रेम के साथ मिले । दोनो के हृदय में हर्ष का आवेग इतना प्रबल था कि इसके मारे किसी से मुख से कोई शब्द ही न निकल सका । दोनो एक दूसरे को देखते रहे मानो चिर-पिपासु नेत्र अपनी प्यास बुझाने मे लगे थे । जब हर्ष की अधिकता होती है तो गला रुध जाता है । थोड़ी देर बाद पवनकुमार ने कहा- सकुशल तो हो न ?

हर्ष के अतिरेक से अ जना, पवनकुमार के प्रश्न का उत्तर न दे सकी । इसी बीच वसन्तमाला भी वहा आ पहुंची । पवनकुमार ने हसते हुए कहा - तुम्हारी सखी तो कुछ बोल ही नही सकती । तुम्ही अपनी मुसीबतो की कहानी सुनाओ ।

वसन्तमाला को पिछली घटनाओ का स्मरण होते ही रोना आया । उसने कहा— हमारे ऊपर जो विपदाए पड़ीं, उनकी बात न पूछिये । आपके जाने के बाद आपकी माताजी को सखी के गर्भ के विषय मे शका हुई और उन्होंने उन्हे घर से निकाल कर बाहर कर दिया ।

बोलने से मनुष्य के स्वभाव की परीक्षा हो जाती है । अमुक मनुष्य गम्भीर है या उच्छृङ्खल है यह जानने के लिये

उससे थोड़े से बोल ही पर्याप्त है । गम्भीर मनुष्य छोटी-छोटी बातो की ओर ध्यान नही देते । वसन्तमाला दासी थी । उसमे अ जना के समान गम्भीरता नही थी, । इसलिये वह पवनकुमार से सभी छोटी–बडी बाते कहने मे अपना गौरव समझती थी । अ जना ऐसी तुच्छ बातो को कहना अनावश्यक समझती थी ।

वसन्तमाला कहने लगी– घर से निकल हम महेन्द्रपुर गई और फिर हम आदित्यपुर भी पहुची । लेकिन हमे कही भी आश्रय नही मिला । अ जना देवी के पिताजी ने तो राज्य की सीमा मे भी न रहने का हुक्म दिया था । आखिर हम भूख–प्यास को झेलती वन मे पहुची । वन मे पहुच कर वहा के फलो-फूलो से भूख मिटाई । वन मे भटकते समय एक मुनि महात्मा के दर्शन हुए । उन महात्मा ने ही अ जना देवी के भूत–भविष्य की बात सुनाई । उसी वन मे सिंह की गुफा मे आपके इस तेजस्वी बालक का जन्म हुआ । तभी इनके मामा राजा शूरसेन विमान लेकर आ पहुचे । जैसे–तैसे कुछ शान्ति पाने की आशा बन्धी थी कि बीच मे एक भीषण घटना घट गई । आपका यह वज्रागी बालक खेलता-कूदता अचानक विमान से उछल पडा और नीचे जा गिरा लेकिन आप सबके पुण्य–प्रताप से उसे तनिक भी चोट नही पहुची । इतना ही नही, वरन् जिस शिला पर बालक गिरा था, उसके टुकडे-टुकड़े हो गये !

इस प्रकार कहकर वसन्तमाला हनुमानकुमार को उठा लाई और धीरे से उसे पवनकुमार की गोद मे रख दिया । अपने तेजस्वी बालक को इतनी दुर्घटनाओ के बाद

देखकर पवनकुमार को कितना आनन्द हुआ होगा !

सभी लोग हनुमान के समान तेजस्वी और बलिष्ठ पुत्र चाहते होगे परन्तु तेजस्वी सन्तान प्राप्त करने के लिये पवनकुमार और अजना के समान ब्रह्मचर्य पालने का भी विचार करना चाहिये । उनके समान ब्रह्मचर्य का पालन शक्य न हो तो अन्तत परस्त्री को माता-बहिन के समान मानने से शील गुण उत्पन्न होगा और शीलगुण के साथ अन्य अनेक सद्गुण उत्पन्न होगे । अतएव शील गुण प्राप्त करने के लिये सदैव ऊची और पवित्र भावना वनानी चाहिये ।

तेजस्वी वालक को देखकर और उसके पराक्रम की कथा सुनकर पवनकुमार ने कहा–यह वालक वास्तव मे वडा पराक्रम जान पडता है ।

अजना इस कथन का कुछ उत्तर दे, उससे पहले ही वसन्तमाला वोल पडी –"उस समय ऐसे घोर सकट की हालत थी कि वालक का जन्मोत्सव तक न मना सकी ।" इतना कह कर फिर वसन्तमाला रोने लगी ।

तब अजना ने कहा –"तू फिजूल वाते करके क्यो रो रही है ? मै दिखावटी उत्सव को कोई महत्त्व नही देती । मैं तो अन्त करण से यही चाहती हू कि वालक में सत्य-शील आवे और यह भी अपने पिता के समान पराक्रमी बने ।"

इतना कह कर और वसन्तमाला को शान्त करके अजना ने पवनकुमार से कहा –"आपने हमारा वृत्तान्त तो पूछ लिया पर अपने विषय मे कुछ भी न वताया । अव आप अपनी वीती भी सुनाइये ।"

अंजना का कथन सुनकर पवनकुमार सोचने लगे—वास्तव मे यह सती परदु ख मे दु ख और परसुख मे सुख माननने वाली है। यह अपना वृत्तान्त न कहकर मेरा वृत्तान्त पूछती है ! इस प्रकार मन ही मन सोचकर वह अ जना से कहने लगे—तुमसे विदा लेकर मैं रावण के पास पहुंचा। रावण ने मुझसे कहा—तुम आये सो अच्छा ही है, मगर जब वरुण पर विजय प्राप्त करके आओगे तब मैं तुम्हार सत्कार करू गा। आखिर मैं वरुण के साथ युद्ध करने गया। युद्ध एक वर्ष तक चलता रहा। एक वर्ष बाद मेरी विजय हुई। मैंने खरदूषण को शत्रु के पजे से छुडाया। रावण मेरी विजय से अत्यन्त प्रसन्न हुआ। लौटने पर उसने मेरा खूब सत्कार किया।

युद्ध मे विजय प्राप्त करके जब मैं खुशी-खुशी घर आया तो तुम्हारे निकाले जाने का हृदयवेधी समाचार सुनने को मिला। मैं अपने मित्र प्रहस्त के साथ तुम्हारी खोज मे निकला। हम दोनो सीधे महेन्द्रपुर पहुचे पर वहा तुम्हारा पता नही लगा। वहा से निराश होकर भयानक वन मे भटकते रहे। जब वहा भी तुम्हारा पता न मिला तो मुझे बडी निराशा हुई। निराशा से प्रेरित होकर मैंने प्राणत्याग करने का सकल्प कर लिया। अपना सकल्प जब मैंने प्रहस्त पर प्रकट किया तो वह बहुत दु खी हुआ। उसने मुझे समझाने का यत्न किया पर निराशा के अन्धकार मैं मुझे कुछ सूझा नही। मैंने उसका कहना स्वीकार नही किया। आखिर उसने कहा मैं आपके सकल्प की सूचना पिताजी को देकर आऊ तब तक आप प्राणत्याग न करे। मैंने यह स्वीकार किया किन्तु उसके चले जाने के बाद जब मैं

अकेला वन मे रह गया तो फिर विचारो की आधी चलने लगी। सोचा—अभी एकान्त है रोकने वाला नही है। प्रहस्त और पिताजी के आने से पहले ही अपने प्राणो को शरीर से मुक्त कर लेना अच्छा है। यह सोचकर जैसे ही मैं अपने सकल्प को पूर्ण करने के लिये उद्यत हुआ कि उसी समय पिताजी प्रहस्त के साथ आ पहुंचे। उन्होने मुझे प्राण-त्याग नही करने दिया और आज हम लोगो को मिलने का सुअवसर मिल गया।

पवनकुमार का वृत्तान्त सुनकर अजना के नेत्रो मे आसू आ गये। उसने कहा—मेरी तकदीर अच्छी थी ऐन मौके पर पिताजी वन मे जा पहुचे। मैं परमात्मा और अपने श्वसुरजी का उपकार मानती हू, जिन्होने मेरे सुहाग की रक्षा की।

पवनकुमार बोले मेरे हृदय मे तुम्हारे प्रति जो प्रेम जागृत हुआ, वह तुम्हारे सुन्दर शरीर के कारण नही, वरन् सत्य और शील के कारण। मेरी भूल ने ही तुम्हे कष्ट मे डाला था। भूल का प्रायश्चित करने के निमित्त ही मैं प्राणो का उत्सर्ग करना चाहता था।

धर्म का पालन करने के कारण ही आज हम अजना और पवनकुमार की प्रशसा करते हैं। राम की प्रशसा और रावण की निन्दा क्यो की जाती है? इसलिए कि राम मे धर्म और न्याय था किन्तु रावण मे धर्म और न्याय नही था। इससे भलीभाति सिद्ध होता है कि वास्तव मे व्यक्ति का स्वय कोई मूल्य नही है—मूल्य होता है उसके सद्गुणो का। गुण ही प्रशसापात्र होते हैं। अतएव प्रत्येक आत्म-हितैषी व्यक्ति को चाहिये कि वह धर्म और न्याय को अपने

हृदय मे धारण करे । धर्म और न्याय को स्थान देने पर भी अगर कोई तुम्हारी प्रशंसा नही करता तो मत करने दो । तुम अपने हृदय मे इस प्रकार का विचार भी मत लाओ । दुनिया मे प्रशसा न होने पर भी धर्म और न्याय की आराधना निष्फल नही हो जायेगी । आगे चलकर एक-एक परमाणु का भी हिसाब होगा । इसलिये यह सोचकर हताश न होओ कि हमारी कोई गिनती ही नही करता । परमात्मा के यहा सबकी गणना है, यह मानकर धर्म और न्याय को हृदय मे स्थान देने का उत्साह पूर्वक प्रयत्न करो।

अजना और पवनकुमार को परमात्मा पर पूरी आस्था थी और इसी कारण वे दोनो अपने—अपने धर्म का पालन करने मे समर्थ हुए । परमात्मा सर्वज्ञ है, ऐसा मानने से धर्म का पालन दृढतापूर्वक हो सकता है । जैसे सच्चा सेवक अपने स्वामी की अनुपस्थिति मे भी बराबर काम करता है, उसी प्रकार सच्चा भक्त भी यही सोचता है कि मुझे दूसरा कोई देखे या न देखे, परमात्मा तो सभी जगह देखता ही है । जब जड मशीन भी अपना कार्य नियमित रूप से करती है तो क्या हम लोग चेतन विवेकविभूषित होकर भी जड मशीन की भाति भी अपना कार्य नियमित नही कर सकते ? जब कोई देखे तो धर्म का पालन करे और जब देखने वाला न हो तो धर्म को धत्ता बता दे ? सच्चे भक्त के लिये तो प्रति क्षण धर्म तथा न्याय का आचरण करना ही बतलाया गया है । शास्त्र मे कहा है—

'से दिया वा राम्रो वा एगम्रो वा,
परिसागम्रो वा सुत्ते वा जागरमाणे वा ।'

अर्थात्—दिन हो या रात हो, अकेला हो या समूह मे

हो, सोता हो या जागता हो, जो समान भाव से धर्म पालन करता है, वही सच्चा साधु या भक्त है ।

राजा महेन्द्र भी उस समय हनुमत्पाटन मे पहुच गये थे । उन्होने पवनकुमार को महेन्द्रपुर चलने का निमत्रण दिया और राजा प्रह्लाद ने घर चलने को कहा । पवनकुमार ने विचार किया - पिताजी का घर ही मेरा है । अतएव अपने घर न जाकर श्वसुर के घर जाना अनुचित है । ससुराल मे कितना ही आदर क्यो न होता हो, आखिर तो अपने घर ही जाना पडता है । ऐसी स्थिति मे पहले अपने घर ही जाना उचित है ।

पवनकुमार और अंजना, हनुमानकुमार और वसन्तमाला सहित प्रह्लाद राजा के साथ अपने घर के लिये रवाना हुए । राजा शूरसेन ने विचारा—यद्यपि राजा महेन्द्र के साथ मेरा सीधा सम्बन्ध हे, फिर भी उचित तो यह है कि पहले पवनकुमार अपने घर जाए । अतएव मैं कैसे कह सकता हू कि वह पहले ससुराल जाए ? - इस प्रकार विचार कर शूरसेन ने पवनकुमार आदि को प्रसन्नतापूर्वक विदा दी ।

राजा प्रह्लाद के आह्लाद का इस समय क्या कहना है ? वह बडी ही प्रसन्नता के साथ पवनकुमार आदि को साथ लेकर घर की ओर चले । अपने घर के बाहर तक आकर रानी केतुमति ने सबका स्वागत किया और फिर पवनकुमार को सम्बोधित करके कहा— बेटा, मैं तुझे भूल गई थी पर मेरे सौभाग्य से तू मुझे नही भूला था । मैंने तेरे आने की राह न देखकर अ जना को घर से बाहर निकाल दिया ।

केतुमती इतना कह पाई थी कि अंजना वहा आ पहुंची। उसने केतुमति के चरणो मे प्रणाम किया। केतुमती का दिल भर आया। गद्गद् कठ से वह वोली– वहू! मैंने तुम्हे वहुत कष्ट पहुचाये हैं। तुमने मुझसे वहुत कहा, पर मैंने तुम्हारी वात पर कान नही दिया, इतने पर भी तुमने मेरा परित्याग नही किया, यह तुम्हारी उदारता है। वेटी, तुम वहुत गुणवती हो, जैसे नौका समुद्र से तारती है, उसी तरह तुमने भी हम सवको तार दिया है। ऐसा कहते-कहते केतुमती की आखो से आसू वरसने लगे।

अंजना ने अपनी सास को आश्वासन देते हुए कहा– माताजी आप जरा भी खेद न करे। वह सव तो मेरे ही कर्मों का भोग था। इसमे तुम क्या करती?

अजना चाहती तो सास को उपालम्भ दे सकती थी और अपनी स्थिति पर गर्व कर सकती थी। मगर वह विचार–शीला रमणी थी। इसी कारण उसने ऐसा नही किया। वह वोली– आपकी मेरे ऊपर वडी कृपा थी। इसीलिये आपने उस समय मेरा कहना नही माना था। कदाचित् उस समय आपने मेरी वात मानली होती और मुझे वाहर न निकाला होता तो आज जो अपूर्व और अद्भुत आनन्द प्राप्त हो रहा है, सो कैसे प्राप्त होता? इस घटना से मेरी जो प्रशंसा हुई है, वह आपकी कृपा का फल है।

केतुमती पहले सोचती थी कि अव सभी लोग अंजना के पक्ष मे है इस कारण अव वह वैर का वदला लेगी, परन्तु उसके नम्रतापूर्ण वचन सुनकर केतुमती को निश्चय हो गया कि अजना अपनी शक्ति से किसी को कष्ट नही पहुचाना चाहती।

अजना ने राग-द्वेष पर बहुत कुछ विजय प्राप्त करली थी। यही कारण है कि वह भयकर से भयकर और अनुकूल से अनुकूल परिस्थितियो मे समभाव रख सकी। केतुमती पर अजना को क्रोध आना स्वाभाविक था। लेकिन उसने क्रोध न करके उलटा उपकार माना। वह कहती थी—सास ने मेरी परीक्षा की है। ईख की प्रशसा इसी कारण होती है कि घानी मे पेरने पर भी वह मिठास नही छोड़ती। सोने की प्रशसा तभी होती है जब वह ताप–कष–छेद द्वारा शुद्ध होता है। जैसे विपत्ति सहने पर भी ईख और सोना अपना गुण नही त्यागते, उसी प्रकार अजना ने भी अपने सद्गुणो का परित्याग नही किया। क्या अजना के इस विवेकपूर्ण व्यवहार का असर दूसरो पर नही पड़ा होगा? अजना की उदारता देखकर सभी लोगो ने विचार किया होगा कि शक्ति होने पर भी क्षमा करना ही सच्ची क्षमा है।

सबने अपने दिल की बाते एक दूसरे से कह ली और परस्पर क्षमा-याचना भी करली। इसके बाद केतुमती ने प्रह्लाद से कहा—अब पवनकुमार सब प्रकार से योग्य हो गया है। अजना भी योग्य है और फिर हमे पौत्र-रत्न भी प्राप्त हो गया है। अब हमे ससार–व्यवहार मे ही नही फसे रहना चाहिये। अब अपने कधो का भार पवनकुमार और अजना को सौप कर हम लोगो को आत्म–कल्याण मे सलग्न होना चाहिये।

पहले के लोग पुत्र के योग्य होते ही अपने गृहस्थ-जीवन का भार उसके सुपुर्द करके आत्म-कल्याण की आराधना मे सलग्न हो जाते थे। वे लोग आजकल के लोगो की तरह

मरते दम तक हाय-हाय नही करते थे और न हाय-हाय करते मरते थे। उनके त्याग का प्रभाव उनकी सतान पर भी पडता था और फिर सतान भी यथा समय इसी त्याग के आदर्श का अनुकरण करती थी। किन्तु आजकल पुत्र-पौत्र के योग्य हो जाने पर भी लोग मरते समय तक सासारिक प्रपंचो मे फसे रहते हैं और हाय-हाय करते हुए ही मौत के शिकार होते हैं। माता-पिता के इस व्यवहार का प्रभाव उनकी सन्तान पर पडे बिना कैसे रह सकता है? नतीजा यह होता है कि सन्तान भी सासारिक कार्यों मे फसी रहना पसन्द करती है और अन्त मे वह भी झूर-झूर कर मरती है। माता-पिता त्याग के आदर्श का अनुकरण करे तो सन्तान त्याग का महत्त्व समझे और त्याग का कनुकरण करे।

एक आदमी हाय-हाय करते मरने का आदर्श अपनी सन्तान के सामने उपस्थित करता है और दूसरा आदमी त्याग का आदर्श रखता है। इन दोनो मे कौन अपनी सन्तान के सामने ऊचा आदर्श उपस्थित करता है? इस प्रश्न के उत्तर मे आप यही कहेगे कि जिसने त्याग का आदर्श उपस्थित किया है उसी ने अच्छा काम किया है। अगर वास्तव मे ही आपको यह बात अच्छी लगती हो तो आप भी अपनी सन्तान के सामने यही आदर्श रखिए।

१८ : हनुमान की वीरता

राजा प्रह्लाद, पवनकुमार को राजपाट सौपकर केतुमती के साथ आत्मा का कल्याण करने के लिये वन मे गये। जब माता-पिता वन मे चले गये तो पवनकुमार ने अजना से कहा—अब हम लोगो पर राज्य-सम्बन्धी कर्त्तव्य का भार

आ पड़ा है, हमें क्या करना चाहिये ?

अ जना—हम लोगो के सामने माता-पिता ने त्याग का जो आदर्श उपस्थित किया है, उसी आदर्श के अनुसार हमे भी एक दिन हनुमानकुमार को राजपाट सौपकर आत्म-कल्याण करना चाहिये ।

इस प्रकार अ जना ने अपने हृदय की उच्च भावना व्यक्त की । उसने यह नही कहा कि माता-पिता के वन चले जाने के कारण अब हमे स्वतन्त्रता मिल पाई है, इसलिये स्वतन्त्र होकर राजकीय वैभव भोगना चाहिये । ऐसी खराब भावना न करके ऊची भावना रखने के कारण ही अ जना महासती बन सकी थी ।

पवनकुमार और अ जना हनुमानकुमार को उसके योग्य शिक्षा देने लगे ।

यहा एक प्रश्न किया जा सकता है । वह यह है कि राजा प्रह्लाद पवनकुमार को राज्य भार सौप कर वन मे चले गये और पवनकुमार, हनुमानकुमार को सौंपकर जाने का विचार रखते हैं तो पहले ही राजपाट त्याग कर या स्वीकार ही न करके सयम क्यो नही धारण करते ? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि शास्त्र मे कहा है कि पुत्र को राज्यासन पर स्थापित करने के बाद दीक्षा ली । शास्त्र के इस उल्लेख मे बहुत कुछ रहस्य छिपा हुआ है । उल्लेख से स्पष्ट जान पडता है कि ससार का भार किसी को सौपे बिना यो ही भाग जाना कोई बुद्धिमत्ता नही है । ऐसा करने से आत्मा का कल्याण तो होगा मगर अपना भार किसी को सौंपने की व्यवस्था किये बिना ही चल देने से दूसरो पर

इसका क्या प्रभाव पडेगा ? इस बात को नजर के सामने रखकर अपने भार की समुचित व्यवस्था करने के पश्चात् ही संयम लिया जाता था। शास्त्र मे ऐसा ही आदर्श उल्लिखित हुआ देखा जाता है। आनन्द श्रावक ने भी अपने कुटुम्ब-परिवार के लोगो को इकट्ठा करके और उन्हे भोज देकर कहा था – अब मैं अपने स्थान पर अपने पुत्र को नियुक्त करता हू। इसलिये आपको जो कुछ पूछना हो, इसी से पूछना। मैं तो भगवान् महावीर का मार्ग ग्रहण करता हूं। इस प्रकार आनन्द श्रावक ने आगे-पीछे की व्यवस्था करने के वाद ही ग्यारह प्रतिमाएं धारण की थी। शास्त्रकार आनन्द श्रावक के चरित को आदर्श वतलाते हैं। व्यक्तिगत वात अलग है किन्तु समुचय रूप से तो यही राजमार्ग है। शास्त्र मे वतलाये हुए इस राजमार्ग पर चलने के विचार से ही पवनकुमार तथा अंजना भी हनुमान को राजपाट सौंप कर सयम की आराधना द्वारा आत्मा का कल्याण करने की भावना रखते थे।

पवनकुमार के इस आदर्श को दृष्टि के सामने रखो और पुत्र जब योग्य हो जाय तो अपने कर्त्तव्य का भार उसे सौंप कर आत्मकल्याण का मार्ग स्वीकार करो। इसी मे मनुष्य का सच्चा और शाश्वत हित है। तृष्णा मे फसे रहकर आखिर हाय-हाय करते हुए मरने मे न तुम्हारा हित है और न तुम्हारे कुटुम्ब का ही।

पवनकुमार जव राजा थे तब वरुण और रावण के बीच फिर झगडा पैदा हो गया। वासुदेव के अधोन रहने वाले राजा तो शान्त रहते हैं किन्तु प्रतिवासुदेव के राज्य मे एक न एक झगडा फिसाद होता ही रहता है। रावण ने

वरुण को दबाने के लिये अपनी शक्ति का प्रयोग किया लेकिन वह वरुण को जीत न सका। तब किसी ने रावण को सलाह दी वरुण को जीतने के लिये राजा पवनकुमार को बुलाना चाहिये। पहले भी उन्होने ही उसे परास्त किया था।

पवनकुमार को बुलाने की सलाह रावण को भी पसन्द आई। उसने पवनकुमार को ही बुलावा भेजा। पवनकुमार यद्यपि धर्म को जानते थे किन्तु स्वामी की आज्ञा का पालन करना भी आवश्यक मानते थे। वरुणनाग नतुआ श्रावक था और वेला-वेला का पारणा करता था, फिर भी जब राजा चेटक ने उसे युद्ध मे जाने का आदेश दिया तब वह पारणा करने के लिये भी नही रुका। वह दो के बदले तीन उपवास करके स्वामी की आज्ञा पालने के लिये तत्काल युद्ध के लिये तैयार हो गया। इस प्रकार पहले के लोग अपना ही स्वार्थ न देखते हुए स्वामी की आज्ञा का पालन करना भी अपना कर्त्तव्य समझने थे।

रावण का बुलावा आने पर पवनकुमार युद्ध मे जाने के लिये तैयार हुए। कुमार हनुमान को पता चला कि पिताजी रावण की तरफ से वरुण के साथ युद्ध करने की तैयारी कर रहे हैं। उन्होने सोचा—मेरे होते हुए पिताजी को युद्ध मे जाने की क्या आवश्यकता है? मेरे पिताजी अपने पिताजी को रोक कर स्वय युद्ध मे गये थे तो मैं अपने पिताजी को रोक कर स्वय क्यो न जाऊ। वह युद्ध करने जाए और मैं घर में बैठा रहू, यह उचित नही है, इस प्रकार विचार करके हनुमानकुमार अपने पिता के पास पहुचे। वे कहने लगे आपको युद्ध मे जाने की क्या आवश्यकता है? जब मैं युद्ध मे जाने को प्रस्तुत हू तो आपके जाने की

आवश्यकता ही क्या है ? अबकी बार मैं जाऊंगा ।

हनुमान की वीरतापूर्ण वाणी सुनकर पवनकुमार ने कहा—बेटा, अभी तू बहुत छोटा है । अभी तू युद्ध करने और शत्रुओ के आघातो को सहन करने के योग्य नही हुआ है । इस छोटी-सी उम्र मे तुझे युद्ध करने नही भेजा जा सकता ।

हनुमान—आप मुझे छोटा न समझिये । मेरी उम्र भले थोडी हो पर मेरा पराक्रम शत्रुओं से जरा भी कम नही है । अकुश छोटा-सा होता है लेकिन वह मदोन्मत्त हाथियो को अपने वश मे कर सकता है । इसी प्रकार मैं भी वरुण को वश मे कर लूंगा । आप मुझे युद्ध के लिये जाने की आज्ञा दे दीजिये ।

पवनकुमार सोचने लगे—"हनुमान बालक होने पर भी वीर है । उसके वचनो से ही वीरता टपकती है । सिद्धान्त मे कहा है कि वीर की वीरता और कायर की कायरता उसके वचनो से ही झलक पड़ती है ।"

हनुमान की वीरतापूर्ण बात सुनकर पवनकुमार को हर्ष तो हुआ, लेकिन उसकी बालक-अवस्था देखते हुए अकेले को भेज देने की हिम्मत वह न कर सके । उन्होने सोचा,—बालक हनुमान मेरे ही समान वीर है लेकिन वह वीर वरुण को कैसे जीत सकेगा ? कदाचित् हार गया तो मेरी प्रतिष्ठा मे बट्टा लगेगा और न जाने क्या अमगल हो जाय ?

हनुमान अपने पिता के मन की बात भाप गये । उन्होंने विनयपूर्वक कहा पिताजी, मालूम होता है, आपको मेरी वीरता के विषय मे सन्देह है । लेकिन मैं विश्वास दिलाता हू

युद्ध मे मैं अवश्य ही विजयी होकर लौटूगा । जैसे आप छोटी उम्र मे युद्ध मे गये थे और विजयी होकर लौटे थे, उसी प्रकार मैं भी युद्धक्षेत्र मे अपनी वीरता का परिचय दूगा और विजय प्राप्त करके चारो दिशाओ मे आपकी कीर्ति पताका फहराऊगा ।

पवनकुमार हनुमान की वीरता और उत्साह से पूर्ण बातें सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए । उन्होने उसे युद्ध के लिये जाने की आज्ञा दे दी । पिता की आज्ञा पाते ही हनुमान ने जाने की तैयारी शुरु कर दी । अपनी सेना की तैयारी की और माता-पिता को वन्दन करके वरुण के साथ युद्ध करने के लिये रवाना हुये ।

उधर वरुण भी युद्ध के लिये अपनी सेना तैयार कर रहा था । जब उसे विदित हुआ कि पवनकुमार के बदले उसका किशोरवयस्क पुत्र हनुमान युद्ध करने आ रहा है तब वह मन ही मन मुस्कराया और कहने लगा—जान पडता है पवनकुमार युद्ध से डर गया है और इसी कारण वह अपने कोमल-काय पुत्र को भेज रहा है। हाय, कितना निर्दय है वह जो मौत के भय से स्वय महल मे बैठा है और अपने नादान बालक को भेज रहा है ! खैर, पवनकुमार स्वय अपना होता तो युद्धक्षेत्र मे मैं उसके दात खट्टे कर देता, लेकिन उस छोटे-से बालक के सामने मैं क्या युद्ध करू ! उसे तो मैं यो ही मसल सकता हू । पर ऐसा करने से दुनिया मे मेरी प्रशसा के बदले निन्दा ही होगी ।

इस प्रकार विचार कर वरुण ने हनुमान के सामने युद्ध करने के लिये अपने पुत्रो को ही भेजने का विचार किया। वरुण ने अपने पुत्रो के सामने जब यह चर्चा की तो वे भी

लडने को तैयार हो गये। वे कहने लगे—पिताजी ! हम लोग रण मे विजय प्राप्त करके लौटेगे। इस प्रकार वरुण-पुत्र भी रवाना हुए।

हनुमान युद्धकला मे प्रवीण थे। प्राचीनकाल मे युद्ध-कला भी सिखलाई जाती थी। उस समय आज की भाति उत्साहहीन बनाने वाली शिक्षा नही दी जाती थी वरन् ऐसी शिक्षा दी जाती थी, जिससे विद्यार्थी वीर, धीर और गम्भीर बने।

हनुमान ने विद्यावल से सेना की ऐसी सुन्दर व्यूह-रचना की थी कि शत्रुसैन्य को चारो ओर से घेर कर परास्त किया जा सके। उधर वरुणपुत्र भी अपनी सेना के साथ रण क्षेत्र मे आ पहुचे। सेनाओ मे मार-काट आरम्भ हो गई। वरुणपुत्र आरम्भ मे वडे उत्साह के साथ जूझे। हनुमानकुमार ने ऐसी योजना की थी कि शत्रु-सेना ज्यो-ज्यो बीच मे आती गई, त्यो-त्यो उनकी सेना पीछे हटती गई। यह देखकर वरुणकुमारो ने समझा कि हनुमान की सेना भाग रही है। लेकिन जब हनुमान ने देखा कि शत्रुओ की सेना युद्ध-भूमि के बीचो-बीच आ पहुची है तब उन्होने चारो ओर से इतना प्रबल आक्रमण किया कि शत्रु-सेना घबरा उठी और इधर-उधर भागने लगी। वीर हनुमान ने अपनी सेना के वीरो को आज्ञा दी कि वरुणपुत्रो को पकड लिया जाय। आज्ञा पाते ही वरुणकुमार कैद कर लिये गये। उन्हे नागपाश मे वाध दिया गया। नायको के कैद हो जाने पर सेना कब ठहर सकती थी ? वह इधर-उधर भाग खडी हुई। इस प्रकार वीर हनुमान ने युद्ध-कौशल से तथा विद्या-वल से शत्रुओ पर विजय प्राप्त की। हनुमान को विजयी

हुआ देखकर रावण ने उसे खूब शाबाशी दी। उसका अच्छा आदर-सत्कार किया।

अपने पुत्रो के कैद होने का समाचार पाकर राजा वरुण उन्हे छुडाने और युद्ध करने के लिये आया। वरुण अब भी यही समझता था कि बालक हनुमान को जीत लेना तो खिलवाड के समान है।

वरुण को युद्धक्षेत्र मे आते देख कुमार हनुमान प्रसन्न हुए। वह सोचने लगे अच्छा हुआ जो स्वय वरुण आ गया। मुझे तो इन्ही से मतलब था। मैं वरुण को ही कैद करना चाहता था।

वरुण को युद्धक्षेत्र मे अकेला आते देख हनुमान ने विचार किया—वरुण अकेला है, इसलिये उसे वश मे करने के लिये विद्याबल की सहायता लेना उचित नही है और उसने विद्याबल की सहायता लेना छोड दिया।

उधर वरुण ने देखा बालक हनुमान अकेला है और वह रथ मे नही बैठा है, तो फिर उससे बड़ा होकर मैं रथ मे बैठकर युद्ध कैसे कर सकता हू? इस तरह विचार करके वरुण भी रथ से नीचे उतर पडा।

हनुमान और वरुण मे मल्लयुद्ध होने लगा। कभी हनुमान नीचे गिर पडते तो कभी वरुण नीचे जा पहुचते। थोड़ी देर इसी तरह युद्ध होता रहा। परन्तु हनुमान आखिर अल्पवयस्क ठहरे और वरुण प्रौढ। वरुण ने हनुमान को पछाड़ दिया। वह हनुमान की छाती पर चढ बैठा और उसके बाल खीचने लगा। रावण यह सब दृश्य देख रहा था। उसने सोचा—हनुमान की हार मेरी ही हार होगी।

यह सोचकर उसने हनुमान को ललकारा। रावण की ललकार सुनते ही हनुमान मे दुगुना साहस और वल आ गया। उसने ऐसा जोर मारा कि वरुण नीचे आ गया और हनुमान उसकी छाती पर चढ बैठे। अन्त मे वरुण कैद कर लिया गया।

वरुण जब कैद हो चुके तो उन्हे वडी उदासी आई। वह सोचने लगे –मुझे चाहे हनुमान ने वश मे किया हो, चाहे रावण ने लेकिन वास्तविकता यह है कि मैं पराधीन हो चुका हू। अब मुझे रावण के अधीन होकर रहना पड़ेगा। अब क्या उपाय किया जाय कि मैं पराधीन वनू और रावण के सामने मुझे सिर न झुकाना पडे।

अन्त मे वरुण ने मन ही मन निश्चय करके कहा— "महाराज! भले ही आप मेरे प्राण ले ले, पर मैं परमात्मा के सिवाय किसी दूसरे के सामने मस्तक नही झुका सकूगा। अगर आप मुझे वन्धनमुक्त करदे तो मैं सयम स्वीकार कर आत्मा का कल्याण करना चाहता हू।"

वरुण की बात सुनकर हनुमान ने रावण से कहा— जो पुरुष सयम स्वीकार करना चाहता है, उसे वन्धन मे रखवा योग्य नही है। अतएव राजा वरुण को मुक्त कर देना चाहिये।

हनुमान की सलाह मानकर रावण ने वरुण को मुक्त कर दिया। वरुण ने उसी समय सयम ग्रहण कर लिया। सयमधारी वरुण मुनि को रावण और हनुमान आदि ने वन्दन किया। वन्दन करने के बाद वरुण मुनि ने रावण से कहा—आपका मान अखण्ड रहा।

संयम का भलीभाति पालन करते हुए वरुण मुनि ने आत्मा के कल्याण के लिये अन्यत्र विहार कर दिया ।

वरुण मुनि के विहार होने के पश्चात् रावण, वरुण के नगर मे गया । उनके पुत्रो को राज्यासन पर आसीन किया और अपनी अधीनता स्वीकार कराई । वरुणकुमारो ने विचार किया—हनुमान बालक होने पर भी अत्यन्त पराक्रमी है । अगर अपनी बहिन का विवाह उसके साथ कर दिया जाय तो अच्छा होगा । आखिर हनुमान के साथ लग्न सम्बन्ध कर दिया गया । उन्होने रावण से कहा—अब आपके साथ हमारा ऐसा सम्बन्ध जुड गया है कि भविष्य मे विग्रह होने का कोई कारण उपस्थित न होगा ।

इस विवाह सम्बन्ध से रावण भी बहुत प्रसन्न हुआ । रावण, हनुमान को अपने साथ लंका ले गया और वहा उनका दिलखोल कर सत्कार किया । उसने कहा—हनुमानकुमार ! तुमने राजा वरुण को जीता है, इसलिये तुम्हे धन्यवाद देता हू ।

हनुमान ने कहा—वरुण के विजेता आप हैं मैं नही । मैं तो अभी बालक हू । इस प्रकार दोनो एक दूसरे को विजय का यश देने लगे ।

आज तो यह हालत है कि दूसरो के किये काम को लोग अपना प्रकट करके स्वय यश लूटना चाहते हैं और अहकार से फूले नही समाते । लेकिन वास्तव मे महान् है वह, जो अहकार पर विजय प्राप्त करता है ।

हनुमानकुमार के वर्त्ताव से अत्यन्त प्रसन्न होकर रावण ने उन्हे कुण्डल भेट किये और एक बडी जागीर पुरस्कार में

दी। इतना ही बस न समझ कर रावण ने अपनी बहिन की लडकी – खरदूषण की पुत्री – का विवाह भी हनुमान के साथ कर दिया। खरदूषण ने यह सोचकर कि हनुमानकुमार के पिता ने ही मुझे एक वार बन्धन से छुड़ाया था, प्रसन्नता पूर्वक अपनी पुत्री उन्हे व्याह दी। वास्तव मे कौन ऐसा बुद्धिमान् होगा, जो हनुमानकुमार जैसे पराक्रमी शूरवीर को अपनी कन्या न देना चाहे ?

रावण और हनुमान परस्पर एक दूसरे को विजय का यश फिर देने लगे। इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उन दोनो मे अहकार नही था। रावण में जब तक अहकार का उदय नही हुआ था, तब तक हनुमान ने उसका साथ दिया। बाद मे जब उन्होने समझा कि रावण अ अहकार का पुतला बन गया है तो उसका साथ छोड दिया। उसने अहकारहीन राम का साथ दिया।

यह बात ध्यान मे रख कर अहकार का त्याग करना ही उचित है। असल मे देखा जाय तो अहकार को जीत लेने पर ही भगवान् की उपासना हो सकती है। निरहकार ही परमात्मा का शरण-ग्रहण कर सकता है।

१९ : प्रव्रज्या

कुछ दिनो बाद रावण से विदा लेकर हनुमानकुमार अपने घर लौटे। पवनकुमार ने बड़े प्रेम से उनका स्वागत किया। अजना भी समस्त परिजनो को देखकर प्रसन्न हुई। वह सोचने लगी अब दुनिया के पचडो मे ही मुझे नही पडा रहना चाहिये, किन्तु आत्मा के कल्याण की ओर ध्यान देना चाहिये।

इस गहरे विचार के कारण पिछली रात में उसकी नीद टूट गई। धर्म जागरण करती-करती वह सोचने लगी—पुत्र ने जो विजय प्राप्त की है, उससे क्या मेरी आत्मा की विजय हो सकेगी ? इस समय मुझे जो भी सुख-सामग्री प्राप्त हुई है, वह सब पहले की करनी का फल है। लेकिन उस करनी को इस तरह सासारिक कर्मों मे ही खर्च कर देना उचित नही है। उसी करनी की सहायता से आत्म-कल्याण करना उचित है। अगर इस समय यह न किया तो फिर कब ऐसा सुअवसर मिलेगा ?

इस प्रकार विचार कर अजना सती पवनकुमार के पास गई। वह दोनो हाथ जोड कर उनके सामने खडी हो गई। पवनकुमार ने पूछा कहो, क्या बात है ? आज इस प्रकार प्रार्थी बनकर आने का क्या प्रयोजन है ?

अजना—आपसे कुछ याचना करने आई हू। किसी चीज की आवश्यकता न होती तो इस समय प्रार्थना करने आती ही क्यो ?

पवन०—तो कहो क्या इच्छा है ?

अजना—आपकी आज्ञा हो तो मैं धर्मकरनी मे लग जाना चाहती हू।

पवन०—धर्म करने की मनाई कब है ? खूब किया करो न !

अजना मेरी इच्छा है कि समस्त सासारिक बन्धनो को त्याग कर एकमात्र धर्मक्रिया मे ही अपना शेष जीवन व्यतीत करू।

पवनकुमार अजना का आशय समझ गये। बोले—

अंजना, अचानक ऐसा विचार तुम्हारे हृदय में कैसे उत्पन्न हुआ ? पुत्र अभी छोटा है और नई वहुएं घर पर आई हैं। यह तो आनन्द करने का अवसर है। आनन्द के इस अवसर पर तुम्हें विरक्ति का विचार क्यों आ रहा है ? क्या घर मे रहकर ही धर्मक्रिया नही की जा सकती ?

अंजना - संसार मे ऐसे-ऐसे प्रलोभन हैं कि उनमे फस जाने पर एकाग्र भाव से धर्म की साधना नही हो सकती। कदाचित् आपका विचार मुझे संयम ग्रहण करने से रोकने का हो तो मैं रुकने को भी तैयार हूं, मगर इस शर्त पर कि आप मेरी मृत्यु रोक दें।

पवन० मृत्यु को रोकने की शक्ति तो किसी मे भी नही है। कौन जानता है कि कब काल आ जायगा और कब किसको उठा ले जायगा ? काल स्वच्छन्द विहारी है। वह न रोकने से रुकता है और न बुलाने से आता है।

अंजना -अगर आप काल को नही रोक सकते तो फिर मुझे संयम लेने से क्यो रोकते हो ?

मीरा ने भी कहा था—

परणवुं तो प्रीतम प्यारो अखंड अहवात—
म्हारा रांडवानो भय टालो रे।

इसी प्रकार सती अंजना ने कहा—पतिदेव ! काल आकर कदाचित् आपको उठा ले जायगा तो मुझे वैधव्य की वेदना भोगिनी पडेगी और कदाचित् मुझे उठा ले गया तो आपको विधुरता की व्यथा होगी। ऐसी अवस्था मे काल के आने से पहले ही आत्मकल्याण कर लेना योग्य है। काल का भरोसा ही क्या है ?

अंजना का न्याययुक्त कथन पवनकुमार को भी ठीक

जचा । उन्होने अंजना से कहा—थोडे दिन ठहर जाओ । फिर हम दोनो साथ-साथ सयम स्वीकार करेगे ।

अजना—आपका कहना ठीक है । परन्तु जिसने मृत्यु को जीत लिया हो जो मृत्यु के आने पर भाग कर बच सकता हो, जिसकी मृत्यु के साथ मित्रता हो या जिसे मृत्यु का भय न हो, वह थोडे दिन राह देखे तो ठीक भी कहा जा सकता है परन्तु मैं नही जानता कि मेरी मृत्यु कब आने वाली है ? ऐसी दशा मे मैं समय का दुरुपयोग कैसे कर सकती हू ?

पवनकुमार अजना की युक्ति-युक्त बात का क्या उत्तर देते ? उन्होने सोचा—जब अजना सयम स्वीकार कर रही है तो मे गृहस्थी मे रह कर क्या करूंगा ?

पति-पत्नी-धर्म कैसा होता है, यह बात इस घटना से भली-भाति समझ मे आ जाती है । अंजना सती ने जैसे पत्नी धर्म का आदर्श उपस्थित किया है, उसी प्रकार पवन-कुमार ने पतिधर्म का ज्वलंत उदाहरण सामने रख दिया है ।

आज के पति-पत्नी-धर्म को भूल रहे है । इसी कारण ससार मे दाम्पत्य जीवन दुःखपूर्ण दिखाई देता है । आज साधारण तौर पर यह रिवाज चल पडा है कि पति एक पत्नी के मर जाने पर दूसरी और दूसरी के मर जाने पर तीसरी ब्याह लाता है । मगर यह अन्याय है । पुरुष अपनी स्त्री को तो पतिव्रता देखना चाहते हैं पर स्वय पत्नीव्रतधारी नही बनना चाहते । पुरुषो ने अपनी सुख-सुविधा के अनुकूल नियम घड लिये हैं । परन्तु शास्त्रकार स्त्री और पुरुष के बीच किसी प्रकार का अनुचित भेद न करते हुए, समान रूप

से पुरुष को पत्नीव्रत और स्त्री को पतिव्रत पालने का आदेश देते है। शास्त्रकार उत्सर्ग मार्ग के रूप मे ब्रह्मचर्य पालन का आदेश देते हैं। अगर पूर्ण ब्रह्मचर्य पालने की शक्ति न हो तो पुरुष को पत्नीव्रत और स्त्री को पतिव्रत पालन करने के लिये कहते है। लेकिन पुरुष अपने आपको स्वस्त्री सन्तोष-व्रत से मुक्त समझते हैं और सिर्फ पत्नी से स्वपतिसन्तोष-व्रत पालन कराना चाहते है। वे यह नही सोचते कि जब हम अपने व्रत का पालन नही करते तो स्त्री से यह आशा कैसे रख सकते हैं कि वह अपने व्रत का पालन करे ही! अतएव पुरुषो और स्त्रियो के लिये उचित मार्ग यही है कि दोनो अपने-अपने व्रत का पालन करे। जो व्रत का भली-भाति पालन करता है, उसका कल्याण अवश्य होता है।

अजना सती के साथ पवनकुमार भी सयम स्वीकार करने के लिये तैयार हो गये। हनुमानकुमार को पता चला कि माता-पिता सयम स्वीकार करने के लिये तैयार हैं तो वह अपनी माता के पास पहुचे। माता को प्रणाम करके उन्होने कहा—माताजी! आप मुझ बालक का परित्याग करके कहा जा रही हैं? घर मे रह कर आप धर्म-ध्यान कर सकती हैं। यहा धर्म-ध्यान के लिये कौन मनाई करता है?

अजना ने कहा—पुत्र तुम व्यर्थ मोह मे पड रहे हो। क्षत्रिय सग्राम से भय नही खाते। मैं तुझे युद्ध मे जाने से रोकती तो क्या मैं वीर-माता कहला सकती थी? अगर नही तो तू मुझे क्यो रोकता है? मैं कर्मशत्रुओ को जीतने के लिये युद्ध मे जा रही हू। ऐसे मौके पर तू अपने को छोटी उम्र का कह कर मुझे दीक्षा लेने से रोकना चाहता है। यह क्षत्रिय पुत्र को शोभा नही देता। काल निर्दय है और

शरीर दुर्बल है। कोई नही जानता कि कराल काल का कब आक्रमण हो जायगा। ऐसी दशा मे कर्मशत्रुओ को जीतने के लिये जाती हुई अपनी माता को रोकना और वीरपुत्र होकर कायरता दिखलाना उचित नही है।

हनुमान धीर-वीर थे। वह समझ गये कि अब माता-पिता की रुचि गृहस्थ होकर रहने की नही है और बिना इच्छा के उन्हे रोक रखना उचित नही है। यह सोचकर दीक्षा महोत्सव करने की तैयारिया आरम्भ की। पवनकुमार और अजना ने यथासमय भावपूर्वक सयम अगीकार किया। हनुमान ने सोचा—अब मुझे माता के दर्शन कब होगे? यह सोचकर उन्होने माता के केशु अपनी गोद मे ले लिये और उन्हे घर ले आये। उनकी धारणा थी कि जब-जब मैं इन केशो को देखूगा, तब-तब मुझे माता का स्मरण हो आयेगा और माता के केशो का दर्शन भी होगा।

अजना और पवनकुमार सयम का बराबर पालन करने लगे। सयम का विधिपूर्वक पालन करके अजना सती आयु का क्षय होने पर स्वर्ग गई और वहा से उनका जीव महाविदेह क्षेत्र मे जन्म लेकर मोक्ष प्राप्त करेगा।

यहा अजना सती की कथा समाप्त होती है। कथा का सार यही है कि मोह पर विजय प्राप्त करके धर्म पर दृढ श्रद्धा रखेगा और धर्म के मार्ग पर चलेगा, वह अवश्य ही शाश्वत कल्याण का भागी होगा।



जवाहर-साहित्य

	किरण		किरण
दिव्य दान	१	दिव्य जीवन	२
दिव्य सन्देश	३	जीवन धर्म	४
सुबाहुकुमार	५	रुक्मिणी विवाह	६
जवाहर स्मारक	७	सम्यक्त्वपराक्रम भाग-१	८
सम्यक्त्वपराक्रम भाग-२	९	" " " ३	१०
" " " ४	११	" " " ५	१२
धर्म और धर्मनायक	१३	राम वन गमन भाग-२	१५
राम वन गमन भाग-१	१४	अंजना	१६
पाण्डव चरित्र भाग-१	१७	पाण्डव चरित्र भाग-२	१८
बीकानेर के व्याख्यान	१९	शालिभद्र चरित्र	२०
मोरवी के व्याख्यान	२१	सम्वत्सरी	२२
जामनगर के व्याख्यान	२३	प्रार्थना प्रबोध	२४
उदाहरण माला भाग-१	२५	उदाहरणमाला भाग-२	२६
उदाहरण माला भाग-३	२७	नारी जीवन	२८
अनाथ भगवान भाग-१	२९	अनाथ भगवान भाग-२	३०
गृहस्थ धर्म भाग-१	३१	गृहस्थ धर्म भाग-२	३२
गृहस्थ धर्म भाग-३	३३	सती राजमती	३४
सती मदनरेखा	३५	हरिश्चन्द्र तारा	३६
सकडाल पुत्र:	३७	जवाहर ज्योति	३८
जवाहर विचार सार	३९	सुदर्शन चरित्र	४०
सती वसुमति भाग-१	४१	सती वसुमति भाग-२	४२

(किरण ४३ से ५० भगवती सूत्र के भाग १ से ८)
किरण ५१ से ५३ राजकोट के व्याख्यान भाग १ से ३)